अध्याय-I

संभावनाएं

वैश्विक वित्तीय ढांचे के सामने विद्यमान चुनौतियों के बारे में किसी भी विचार-विमर्श की शुरुआत उन महत्वपूर्ण घटकों के आकलन से हो सकती है जिन्होंने इस संकट की शुरुआत से पहले वैश्विक वित्तीय प्रणाली को आकार प्रदान किया था। वैश्विक वित्तीय संकट और इसके बाद आई मंदी ने वृद्धि का मार्ग प्रशस्त करने वाली वित्त व्यवस्था को कलंकित किया। वैश्विक प्रवृत्तियां बहुत-सी महत्वपूर्ण संभावनाओं को उजागर कर रही हैं। इनका दायरा वित्तीय नव-संकल्पनाओं की महती भूमिका के साथ-साथ विनियामक पहलुओं पर सवाल उठाने से लेकर बहुत-से अन्य विषयों तक फैला हुआ है। नीति निर्माताओं और विद्वानों दोनों ही के समूह अपनी-अपनी संकल्पनाएं लेकर सामने आ गए हैं, जिनमें संकट के कारणों के विश्लेषण और तात्कालिक और दीर्घावधि समाधानों के बारे में आकलन किए गए हैं। यद्यपि, वैश्विक संभावनाओं से काफी कुछ सीखने को है और विभिन्न वैश्विक नव-संकल्पनाओं से काफी कुछ लाभ मिलेगा, तथापि, भारतीय बैंकिंग की बहुत-सी ऐसी परिपाटियां हैं जिन्हें दूसरे देश अपना सकते हैं। वर्ष 2008 में वित्तीय रूप से शुरू हुए वैश्विक संकट के बीच भारतीय बैंकिंग सफलता की कहानी कह रही है, जिसका श्रेय विद्यमान विनियामक परिवेश और संरचनाबद्ध बैंकिंग संचालकों को जाता है। यह एक भीतरी शक्ति है जिसका दोहन किया जा सकता है और यह आगे के लिए अनुकूल दृष्टिकोण का निर्माण करती है। इन घटकों का पता लगाकर इनका समेकन करने की जरूरत है।

1. परिचय

1.1 वित्तीय प्रणाली की प्रमुख भूमिका यह है कि सर्वाधिक उत्पादक कार्यों में पूंजी का निवेश करवाया जाए। पश्चिमी अर्थव्यवस्थाओं की प्रबल वृद्धि और प्रौद्योगिकीय प्रगति को देखते हुए यही लगता है कि हमारी वित्तीय प्रणाली अपने कार्य को लम्बे समय से बखूबी निभा रही है। हालांकि वैश्विक वित्तीय संकट और इसके बाद आई मंदी ने इस रिकार्ड को कलंकित किया है। ऐसा समय आ गया हैं जब ऐसे प्रश्न पूछे जा रहे हैं कि 'क्या अतिसमर्थ वित्तीय व्यवस्था वृद्धि का दशमांश लेती ही है?' इस मूलभूत प्रश्न पर भी चर्चा हो रही है कि हमारी वित्तीय प्रणाली हमारी अर्थव्यवस्था को वास्तव में क्या प्रदान कर रही है, और इस कार्य के बदले क्या भरपाई करनी पड़ रही है। यह भी तर्क दिए जाते हैं कि वित्तीय संकट के बाद परिष्कार कैसे हो और ऐसी ही दूसरी किसी घटना से बचाने के लिए अपनी अपघात-संभाव्य वित्तीय प्रणाली को किस प्रकार सुधारें - जैसी समस्याओं पर होने वाले लम्बे वाद-विवाद इस समस्या पर आकर रुक गए हैं कि बाजारों को किस प्रकार विनियमित किया जाए कि इनसे होने वाले लाभों पर कोई असर न पड़े।

1.2 विशेषकर 1997 में हुए पूर्वी एशियाई संकट के बाद यह सर्वमान्य हो गया है कि विगत दो दशकों में नाटकीय रूप से बढ़ चुके विदेशी पूंजी के विशाल प्रवाह के परिवेश में वित्तीय क्षेत्र को प्रतिरोधी और सुनियंत्रित होना ही चाहिए। विद्यमान वैश्विक वित्तीय संकट के दौरान यह तथ्य पूरी तरह से स्पष्ट हो गया है कि भलीभांति परीक्षित मौद्रिक नीति और विनियामक व्यवस्था वाले विकसित वित्तीय बाजार भ4ी इस प्रकार की अप्रत्याशित और असाधारण गतिविधियों से मुक्त नहीं हैं। खुले बाजारों की संभावनाओं का लाभ उठाने के लिए प्रभावी विनियमन की जरूरत है। वित्तीय नवोन्मेषों और एकीकरण ने आस्तियों के सभी वर्गों और एक से दूसरे देश तक पहुंचने वाले आघातों की सीमा और गति को बढ़ा दिया है, और सर्वांगीण रूप से विकसित और अविकसित संस्थाओं के बीच की सीमारेखाएं धूमिल हो चुकी हैं। लेकिन विनियमन और पर्यवेक्षण का ध्यान विशिष्ट वित्तीय संस्थाओं की तरफ है। विनियामक व्यवस्थाओं में स्वदेशी संस्थाओं के क्रियाकलापों के प्रणालीगत और अंतरराष्ट्रीय निहितार्थों पर पर्याप्त रूप से विचार नहीं किया जाता है।

1.3 वर्तमान वैश्विक और भारतीय बैंकिंग प्रवृत्तियों को ध्यान में रखते हुए खंड 2 में वैश्विक बैंकिंग गतिविधियों पर प्रकाश डाला गया है, खंड 3 में उभरते भारतीय परिप्रेक्ष्य का विवरण है और खंड 4 में अध्याय का समापन किया गया है।

2. वैश्विक प्रवृत्तियों से संभावनाएं

1.4 वैश्विक वित्तीय व्यवस्था के सामने विद्यमान चुनौतियों के बारे में किसी भी विचार-विमर्श की शुरुआत उन महत्वपूर्ण घटकों के आकलन से हो सकती है जिन्होंने इस संकट की शुरुआत से पहले वैश्विक वित्तीय प्रणाली को आकार प्रदान किया था। आपस में मिलकर प्रबल होते जा रहे घटकों के तीन समूहों पर विनियामक और मौद्रिक प्राधिकरणों ने पर्याप्त ध्यान नहीं दिया, तर्क दिया जाता है कि इनसे प्रणालीगत जोखिम को बढ़ावा मिला। पहला, विगत दशक के दौरान वैश्विक समष्टि आर्थिक असंतुलनों के कारण ब्याज दरें कम हुईं, इससे अधिकाधिक जोखिम उठाने की प्रवृत्ति को बढ़ावा मिला, और समूचे विश्व में आस्ति कीमतों में अस्थायी उछाल आ गया। दूसरे, वित्तीय क्षेत्र संरचना में परिवर्तन और वित्तीय नवोन्मेषों के अनुरूप जोखिम प्रबंधन में विफलता - छाया बैंकिंग प्रणाली को महत्व प्रदान करने सहित प्रतिभूतिकरण की प्रवृत्ति - इन सबने विगत दो दशकों के दौरान प्रणाली को अस्थिरता की ओर धकेल दिया। और, तीसरे, लीवरेज वाली वित्तीय संस्थाओं में यह प्रवृत्ति होती है कि ये प्रणालीगत जोखिम को आंतरिक रूप से परखे बिना अत्यधिक जोखिम उठाती हैं, और यही मुख्य कारण भी है कि इन पर नियंत्रण की जरूरत है।

1.5 नीति निर्माताओं और विद्वानों दोनों ही के समूह अपनी-अपनी संकल्पनाएं लेकर सामने आ गए हैं, जिनमें संकट के कारणों का विश्लेषण और तात्कालिक और दीर्घावधि समाधानों के बारे में निष्कर्ष दिए गए हैं। (उदाहरण के लिए डी लैरोसीयर रिपोर्ट (2009), दि टर्नर रिव्यू (2009), दि जेनेवा रिपोर्ट (2009), दि ग्रुप ऑफ थर्टी रिपोर्ट (2008) और द आइएमएफ लैसन्स पेपर (2009)। वित्तीय संकट ने विद्यमान विनियामक और पर्यवेक्षी व्यवस्थाओं की कमजोरियों को उजागर किया है। हाल ही के घटनाक्रमों ने यह स्पष्ट कर दिया है कि संकट की स्थितियों को कम करने और जब कभी भी संकट पैदा हो उससे निपटने के लिए कम-से-कम चार क्षेत्रों में काम करने की जरूरत है। ये हैं (क) अच्छे समय के दौरान प्रणालीगत जोखिम का आकलन करने और इनके जमाव को रोकने के लिए बेहतर तरीकों की तलाश; (ख) पारदर्शिता बढ़ाना तथा बाजार के विभिन्न सहभागियों द्वारा उठाई जा रही जोखिमों के बारे में स्पष्ट रूप से जानकारी देना; (ग) रचनात्मक विविधता की रक्षा करते हुए विनियमन के दायरे को अंतर-संस्था और सीमा-पार देशों तक बढ़ाना; और (घ) अधिक प्रभावी, समन्वित कार्रवाई के लिए क्रियाविधि तैयार करना।

1.6 वित्तीय विनियमन के दायरे का पुनरीक्षण करने और चलनिधि के प्रावधान में सुधार की जरूरत है। वैश्विक वित्तीय संकट में सबसे ज्यादा योगदान अपर्याप्त विनियमनों का था - इनकी प्रकृति विखंडित थी और इन्हें लागू करने में ढील की गई। विनियामक संरचनाओं का पुनरीक्षण किया जाए, ताकि प्रणालीगत जोखिमों के पुनः बढ़ाने को रोका जा सके, वैश्विक वित्तीय मध्यस्थता के जरिये वैश्विक बचतकर्ताओं और निवेशकों को आपस में जोड़ने के लिए मजबूत आधार प्रदान किया जाए, और जब भी वित्तीय अस्थिरता पैदा हो तो उससे निपटने के लिए स्पष्ट और संगत विधि सुनिश्चित की जा सके। प्रणालीगत संकटों से बचाव के लिए विभिन्न क्षेत्रों पर ध्यान देने की अपेक्षा है, जैसे -

- *विनियमों की परिधि,* या विनियामकों के अधिकार क्षेत्र में कौन-सी संस्थानों और परिपाटियों को लिया जाना चाहिए;
- *अनुचक्रीयता,* व्यवसाय चक्र को बढ़ाकर दिखाने के लिए कुछ विनियामक और व्यवसायी परिपाटियों के लिए प्रवृत्ति होना;
- वित्तीय प्रणाली में जोखिम की जानकारी और इनके प्रसार के बारे में *सूचना में अंतराल;*
- राष्ट्रीय विनियामक नीतियों और कानूनी व्यवस्था को समरूपी बनाना ताकि सीमापार देश में परिचालन करने वाले फर्मों और बाजारों के *समन्वित पर्यवेक्षण* और समस्याओं के समाधान को बढ़ाया जा सके; और
- बाजारों को *चलनिधि प्रदान करना* ताकि निवेश और मौद्रिक नीति के प्रभावी संचरण के लिए निधियों का सहज प्रवाह सुनिश्चित हो सके।

1.7 विनियमों की परिधि : नवीनतम संकट से यह सबक मिला है कि विनियमों की परिधि का विस्तार करने की जरूरत है ताकि उन संस्थाओं और बाजारों को भी इनके दायरे में लाया जा सके जो विनियमों की परिव्याप्ति से बाहर थे, और कुछ मामलों में विनियामकों और पर्यवेक्षकों की पकड़ से दूर थे। इनमें से कुछ संस्थाएं तो ऐसी थीं जो दीर्घावधि आस्तियों में निवेश के लिए अल्पावधि ऋण प्राप्त करने में सफल रहीं और अपनी लीवरेज

(आस्ति खरीदने के लिए ऋण का प्रयोग) को ऐसे स्तर तक ले गईं कि अल्पावधि कर्जदाताओं द्वारा अपनी निधियां वापस मांगने पर वित्तीय प्रणाली की स्थिरता को खतरा हो गया। तथापि, सभी वित्तीय मध्यस्थों को दायरे में लेना आवश्यक नहीं है और उन विशिष्ट कमजोरियों का सावधानीपूर्वक अभिनिर्धारण महत्वपूर्ण है, जिन पर व्यापक विनियमन के माध्यम से ध्यान देते हुए बाजार की विफलता को दूर किया जाएगा। इसे दोहरी- परिधि वाले दृष्टिकोण के माध्यम से प्राप्त किया जा सकता है - वित्तीय संस्थाएं और क्रियाकलाप बाहरी परिधि में रहेंगे और इन पर प्रकटीकरण की अपेक्षा लागू होगी, जबकि प्रणालीगत जोखिम पैदा करने वाली संस्थाओं को आंतरिक परिधि में लाया जाएगा और इन पर विवेकपूर्ण विनियम लागू होंगे।

1.8 अनुचक्रीय व्यवहार : वर्तमान वित्तीय संकट बैंकिंग में अत्यधिक अनुचक्रीयता का एक उदाहरण है। यह एक सुपरिचित तथ्य है कि तेजी के दौरान कर्ज देने के बारे में बहुत गलतियां होती हैं। कर्ज लेने वाले और देने वाले दोनों ही निवेश परियोजनाओं के प्रति जरूरत से ज्यादा विश्वास जताने लगते हैं और ऋण के मानकों को शिथिल करने की प्रवृत्ति बन जाती है। मंदी के दौरान बैंक अचानक ही रूढ़िवादी बन जाते हैं और ऋण देने के मानकों को सख्त कर देते हैं। इसके अलावा, यदि मौद्रिक नीति काफी लम्बे समय तक नरम बनी रहती है तो इससे बैंकों द्वारा जोखिम उठाने के लिए दिए जाने वाले प्रोत्साहन बढ़ सकते हैं, क्योंकि बैंकों को प्रतिफल की तलाश रहती है।

1.9 ऋण-हानि के गतिशील प्रावधान बैंकिंग में अनुचक्रीयता से निपटने में मदद कर सकते हैं। ये ऋण संविभागों में क्रेडिट हानियों को पहले ही पकड़कर इनके संबंध में प्रावधान करके बैंकों को अच्छे समय में बफर का निर्माण करने में मदद करते हैं, जिसका प्रयोग दुर्दिनों में किया जा सकता है। इनकी प्रतिचक्रीयता वाली प्रकृति बैंक-विशेष और सम्पूर्ण बैंकिंग प्रणाली की आघात-सहनीयता को बढ़ाती है।

1.10 बैंकिंग क्षेत्र के लिए नई विनियामक संरचना का एक अन्य तत्व है पूंजी के संशोधित नियम। पूंजी संबंधी अनुचक्रीयता नियमों की समस्या का निराकरण करके वित्तीय संस्थाओं को मजबूत बनाने के लिए पूंजी का बफर पर्याप्त रूप से बड़ा किया जाना चाहिए। नए नियमों में बैंकों के लिए यह बाध्यता होनी चाहिए कि लाभ कमाने के दौरान वे विनियामक पूंजी को बढ़ाएं, क्योंकि उस समय ऐसा करना आसान होता है, इससे अधिक कठिन हालात में हानियों को सहन करने के लिए बफर मिलेगा और अर्थव्यवस्था को लगातार ऋण प्राप्त होते रहेंगे।

1.11 इस संकट से लीवरेज की भूमिका भी सामने आ गई है। सिद्धांत रूप में जोखिम भारित पूंजी अपेक्षाओं से अत्यधिक लीवरेज पर नियंत्रण रहेगा, जिसमें कम जोखिम वाली आस्तियों की तुलना में अधिक जोखिम वाली आस्तियों के लिए ज्यादा पूंजी अपेक्षित है। तथापि, जोखिम मॉडलों की अपर्याप्तता के कारण पूंजी की अपेक्षित मात्रा का आकलन कम होने से लीवरेज में अत्यधिक वृद्धि हो जाती है। अतः तेजी[1] के दौरान वित्तीय संस्थाओं में समग्र लीवरेज को सीमित करने के लिए तुलनपत्र से इतर मदों सहित लीवरेज अनुपात (पूंजी को आस्तियों से भाग करके) जैसे अपेक्षाकृत सरल मापक का उपयोग करना लाभदायक होगा।

1.12 संस्थाओं द्वारा वर्तमान-बाजार कीमतों का प्रयोग करते हुए आस्तियों का मूल्यांकन करने की अपेक्षा रखने वाली उचित मूल्य लेखांकन विधियां यद्यपि अधिकांश स्थितियों में अच्छे निर्देश-चिह्न हैं, तथापि संकट ने यह आभास दिया है कि तनाव के समय में ये कीमतों के घटने की गति को और बढ़ा सकती हैं। लेखांकन नियमों में ट्रेड की जाने वाली आस्तियों वाली वित्तीय फर्मों को यह अनुमति दी जाए कि वे 'मूल्यांकन आरक्षित निधि' आबंटित करें, जो कि तेजी के दौरान अति मूल्यांकन को प्रकट करते हुए बढ़ जाती हो और मंदी के दौरान न्यूनतर मूल्यांकन की ओर गिरावट की दशा में बफ़र के रूप में कार्य करती हो। इसी प्रकार संपार्श्विक के रूप में प्रयुक्त आस्तियों, जैसे घरों के मूल्यों में भी चक्र के साथ चलने की प्रवृत्ति रहती है। लेखांकन नियम पुस्तकों में अधिक गुंजाइश रखने की जरूरत है ताकि प्रगतिशील और मापन योग्य संकेतकों के आधार पर अधिक रूढ़िवादी मूल्यांकनों की रिपोर्टिंग हो सके।

[1] लीवरेज अनुपात सामान्यतः कुल समायोजित आस्तियों की तुलना में टियर I पूंजी का प्रतिशत होता है जिसमें आस्तियों के समायोजन में वे मदें होती हैं जिन्हें टियर I से पहले ही घटा दिया जाता है, जैसे सुनाम (गुडविल)। इस प्रयोजन हेतु यही परिभाषा अमरीका आदि देशों में प्रयोग में लाई जाती है और इसे विश्व बैंक (2009) द्वारा लीवरेज अनुपात पर अवधारणा नोट 'बैंकिंग एंड लीवरेज रेश्यो' में स्पष्ट किया गया है जो www.crisistalk.org में उपलब्ध है।

1.13 वित्तीय प्रणाली का एक अन्य अनुचक्रीयता लक्षण है चलनिधि के लिए वित्तपोषण - अर्थात् उधार देने के लिए निधि प्राप्त करने में वित्तीय फर्मों की सक्षमता। निधियों में यह प्रवृत्ति है कि तेज़ी के दौर में इनकी प्रचुरता रहती है और मंदी के दौरान इनकी कमी हो जाती है। निधियों की सुस्थिर उपलब्धता सुनिश्चित करने की दिशा में चलनिधि जोखिम के सुदृढ़ प्रबंधन की तकनीकें पहली रक्षापंक्ति होती हैं। निधीयन के कमोबेश परिवर्तनशील रूपों, जैसे अल्पावधिक एकमुश्त निधीयन के स्थान पर छोटी जमाराशियों पर निर्भरता बेहतर रहती है।

1.14 सूचना अंतरालों को दूर करना : इस संकट के सर्वाधिक परेशान करने वाले पहलुओं में से एक यह भी रहा कि यह तथ्य नहीं देखा जा सका कि विभिन्न धारकों के बीच किस प्रकार की जोखिमों का बंटवारा हुआ और ये धारक कौन थे। संरचनाबद्ध नए क्रेडिट उत्पादों में से कई ऐसे थे जिनमें यह अपेक्षित था कि जोखिम उनमें विभाजित हो जो इसका प्रबंधन करने में सर्वाधिक सक्षम हो। लेकिन बहुत से मामलों में, पर्यवेक्षक और बाजार के अन्य सहभागी यह नहीं देख सके कि विभिन्न जोखिम कहां-कहां पर थी, क्योंकि जोखिमों को इस प्रकार से छोटे-छोटे टुकड़ों में बांट दिया गया था कि जोखिमों के पैकेजरों और क्रेताओं को पूरी तरह से यह पता ही नहीं चला कि उन्होंने किस प्रकार की जोखिम बेची या खरीदी है। प्रणालीगत जोखिमों और दुर्बलताओं को जानने के लिए संभवतया प्रणालीगत रूप से महत्वपूर्ण बैंकों और गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थानों की जोखिम संभावनाओं से संबंधित डाटा की सर्वाधिक जरूरत होती है - साथ ही इनके स्तर, इनकी जोखिमों का संकेन्द्रण और देश-विदेश की संस्थाओं और बाजारों में इनके सम्पर्क संबंधी तथ्य जरूरी होते हैं।

1.15 वित्तीय संस्थानों को शामिल करते हुए बेहतर प्रकटीकरण नियम अपेक्षित है ताकि सूचना को अधिक विशिष्ट और तथ्यपरक बनाया जा सके। विशेष रूप से, रिपोर्टिंग में तुलनपत्रों में शामिल की गयी और शामिल न की गयी दोनों प्रकार की मदें शामिल होनी चाहिए क्योंकि बहुत-सी जोखिम संबंधी मदों को निवेशकों और पर्यवेक्षकों से छिपाए रखने के लिए तुलनपत्रों से हटा दिया जाता है। यदि ओवर-दि-काउंटर डेरिवेटिव बाजारों (ओटीसी) की कीमतों, लेनदेन की राशियों से जुड़ी और अन्य संबंधित जानकारी (व्यापकता, प्रतिपक्ष का प्रकार, और बाजार में समग्र संकेन्द्रण) अधिक सुगमता से प्राप्त हों तो बाजार बेहतर कार्य करेंगे। इसी प्रकार आपस में जुड़ी हुई बहुत-सी पार्टियों की बीमा पॉलिसी के रूप में रखे हुए क्रेडिट डिफाल्ट स्वैप (सीडीएस) संबंधी जानकारी की जरूरत होती है। सीडीएस के लिए केन्द्रीकृत क्लियरिंग सुविधाओं का अभी निर्माण किया जा रहा है, और इनसे काउंटर पार्टी जोखिमों को कम करने में मदद मिलेगी और सूचना संग्रहण में भी मदद मिलेगी।

1.16 देश-विदेश के मध्य समन्वय में सुधारः संकट के दौरान देश-विदेश के बीच सूचना के प्रवाह और विनियामकों के बीच सहयोग में असंगति रही है। संकट के साथ जुड़े हुए प्रणालीगत और वैश्विक जोखिमों से सहजतापूर्वक निपटने के लिए वैश्विक और क्षेत्रीय रूप से महत्वपूर्ण वित्तीय फर्मों के पर्यवेक्षण में यह अपेक्षित है कि जिन देशों से अंतरराष्ट्रीय स्वरूप के वित्तीय संगुटों द्वारा परिचालन किए जाते हैं उन देशों के नीतिनिर्माता साथ-मिलकर काम करें ताकि राष्ट्रीय विधिक व्यवस्था की असंगतियों को दूर किया जा सके। दूसरे, यह सुनिश्चित करना महत्वपूर्ण है कि बैंक को दिवालिया घोषित करने की व्यवस्था मूल देश और मेजबान देशों में इस प्रकार की हो कि उनमें मूलभूत रूप से एकरूपता रहे। बैंकों की समस्याओं के समाधान की शुरुआत करने के लिए ट्रिगर्स, समय सीमा और क्रियापद्धति सहित दिशानिदेशों का एक सुसंगत संग्रह एक फर्म की फ्रेन्चाइजी के मूल्य को बनाए रखने में मदद कर सकता है।

1.17 सभी अधिकार क्षेत्रों के बीच आपसी समन्वय को बढ़ाया जा सकता है, उदाहरण के लिए जिन देशों में वह फर्म व्यवसाय कर रही हो उसके नियामकों का एक कॉलेज की स्थापना करके। उस कॉलेज का प्रधान अर्थात् प्रमुख पर्यवेक्षक (विशेष तौर पर बैंक के मूल देश से) सम्पूर्ण फर्म में जोखिम संकेंद्रण के साथ-साथ उसकी प्रमुख मजबूतियों और कमजोरियों की स्पष्ट छवि तैयार करने के लिए उत्तरदायी होंगे। फर्म के अनुमेय क्रियाकलापों के बारे में प्रमुख पर्यवेक्षक और अन्य सक्षम पर्यवेक्षकों द्वारा निर्णय किया जाएगा। यह कॉलेज फर्म के क्रियाकलापों का निरीक्षण करेगा और जरूरत के अनुसार जानकारी का संग्रह करेगा।

1.18 बाजारों को चलनिधि प्रदान करना : इस संकट ने बाजारों को चलनिधि प्रदान करने के विविध तरीकों की शुरुआत की है। केंद्रीय बैंकों ने काउंटरपार्टियों की संख्या में बढ़ोतरी की है, उनके द्वारा

स्वीकार की जाने वाली सांपाश्र्विक प्रतिभूति के प्रकारों को व्यापक बनाया है, और चलनिधि सहायता की परिपक्वता अवधि को बढ़ा दिया है। कुछ मामलों में नई सुविधाओं की शुरुआत हुई है। यह महत्वपूर्ण है कि जरूरतमंद कर्जदारों को आपातकालीन चलनिधि और मध्यस्थता में ऐसा कोई तत्व अवश्य शामिल किया जाए कि स्थितियां सामान्य होते ही इन पद्धतियों को किस प्रकार समाप्त कर दिया जाएगा। चलनिधि और क्रेडिट के आकस्मिक परिवर्तन से बचने के लिए इस निकास की समयबद्धता में समन्वय रखना होगा। निकास रणनीतियों में ऐसे प्रोत्साहन होने चाहिए जो बाजार के सहभागियों को धीरे-धीरे केंद्रीय बैंकों से अलग करके पुनः सामान्य चलनिधि प्रदाताओं की ओर ले जाएं, इनसे अनावश्यक झटकों की संभावना भी नहीं रह जाएगी।

1.19 वित्तीय नवोन्मेषों के पक्ष-विपक्ष पर ध्यान देने की जरूरत है। चार दशकों तक हुए अभूतपूर्व वित्तीय नवोन्मेषों के बाद विगत दो वर्ष की घटनाओं ने वित्तीय नवोन्मेषों की जोखिम के बारे में बहस को जन्म दिया है। सर्वाधिक स्पष्ट रूप से उपयोगी नवोन्मेष रिटेल वित्तपोषण के क्षेत्र में हुए हैं। ये भुगतान बिना किसी प्रतिकूल प्रभाव के प्रयोक्ता-हितैषी की आदर्श स्थिति की श्रेणी में आते हैं, जैसे स्वचालित रूप से रकम देने वाली मशीनें। प्लास्टिक कार्ड वैसे तो दैनिक लेनदेन को बहुत आसान बनाते हैं, लेकिन कई बार ग्राहकों के लिए ऋणग्रस्तता की समस्याएं पैदा करने का कारण बन जाते हैं। बड़ी मात्रा के वित्तपोषण के लाभ तो अनेक हैं पर इनकी कीमत भी चुकानी पड़ती है। इन्होंने 1970 के दशक में नियत विदेशी मुद्रा विनिमय दर को समाप्त किए जाने और ब्याज दरों को नियंत्रणमुक्त करने के बाद आए उतार-चढ़ाव को नियंत्रित करने में मदद की जो क्षेत्र विशेष में सीमित हो गए थे। नवोन्मेष के बारे में विनियामकों के लिए शंकाग्रस्त रहने का सबसे बड़ा कारण तो यही है कि आधुनिक विश्व में अधिकांश नवोन्मेषों का उद्देश्य विनियामक और कर व्यवस्था से बचाव की सुविधा प्रदान करना रहता है, जैसे कि बैंकों द्वारा तुलनपत्रों से इतर मदों के प्रतिभूतिकरण क्रियाकलापों से स्पष्ट होता है। इस समस्या से निपटने के लिए पूंजी पर्याप्तता नियंत्रण पद्धति का प्रयोग करना बेहतर है, क्योंकि (i) सामाजिक लागत और लाभों का आकलन आसानी से नहीं हो सकता, (ii) अधिक आधारभूत तथ्य यह है कि विगत में हुए अधिकांश वित्तीय संकटों की भांति इस बार भी वास्तविक प्रणालीगत नुकसान वित्तीय लिखतों के कारण नहीं बल्कि लीवरेज के कारण हुआ है - पूंजी को ही सुरक्षा पंक्ति में प्रथम और सर्वाधिक महत्वपूर्ण मानने के पीछे यह एक अन्य कारण है।

1.20 कारपोरेट अभिशासन : वित्तीय संकट से यह प्रकट हो चुका है कि कारपोरेट अभिशासन में गंभीर कमियां थीं। सर्वाधिक जरूरत के समय सुदृढ़ कारोबारी व्यवहार को सुधारने में वित्तीय संस्थाओं की जरूरत के अनुसार नियंत्रणों और प्रतिबंधों को लागू करने में ये प्रायः विफल रहे। कुछ बड़ी वित्तीय फर्मों पर आए संकट के केंद्र में कारपोरेट अभिशासन की विफलता की भूमिका स्पष्ट थी। संकट के बाद वित्तीय क्षेत्र में सरकारें प्रमुख शेयर धारक बन चुकी हैं। अतः, उनके आपातकालीन सहायता उपायों से अलग हो जाने पर हितों का टकराव हो सकता है। निजी क्षेत्र के अन्य निकायों सहित सभी संस्थाओं के बीच अंतरराष्ट्रीय सहयोग में सुधार किया जाए ताकि अंतरराष्ट्रीय स्तर पर कारपोरेट अभिशासन के सहमत-मानकों का बेहतर समन्वय और कार्यान्वयन सुनिश्चित किया जा सके। पारिश्रमिक और प्रोत्साहन व्यवस्था को संस्था के अधिकारियों के हितों के साथ-साथ कंपनी और शेयरधारकों के दीर्घावधि हितों के अनुरूप होना चाहिए। इन संरचनाओं में विरूपण होने से अतिरिक्त जोखिम उठाने के प्रति अल्पावधिक झुकाव हो सकता है, बहुत से देशों में यह प्रवृत्ति कर प्रावधानों से प्रबल हुई है। इसके लिए निम्नलिखित क्षेत्रों में सुधार और विश्लेषण की जरूरत है: जोखिम-प्रबंधन व्यवस्था की बोर्ड द्वारा निगरानी; बोर्ड की प्रथाएं; पारिश्रमिक प्रक्रिया का अभिशासन; और शेयरधारकों के अधिकारों का प्रयोग (बॉक्स I.1)।

वैश्विक भुगतान प्रणाली

1.21 अंतरराष्ट्रीय वित्तीय संकट से काफी सबक लिए जा चुके हैं और हमारे सभी अनुभव नकारात्मक नहीं रहे हैं। खुदरा ग्राहकों और उद्यमों के साथ-साथ बैंकों और वित्तीय संस्थाओं के सभी स्थानों की भुगतान प्रणालियों ने सही तरह से कार्य किया। इस प्रकार इन प्रणालियों ने ऐसे समय के दौरान भी आर्थिक क्रियाकलापों को बरकरार रखने में मदद की, जब काउंटरपार्टियों के प्रति भरोसा निचले स्तर था(बॉक्स I.2)।

अंतरराष्ट्रीय लेखांकन मानक

1.22 वित्तीय संकट ने लेखांकन मानकों में सुधार की जरूरत को रेखांकित किया है। जुलाई 2009 में बासल समिति ने ट्रेडिंग बुक के लिए उच्चतर पूंजी मानकों की श्रृंखला जारी की, क्योंकि यह माना

बॉक्स I.1 : वित्तीय संकट और कारपोरेट अभिशासन

- कंपनी के अभिलक्षणों के आधार पर, पारिश्रमिक और प्रोत्साहन व्यवस्था पर बोर्ड (और कई बार विनियामक) के दृष्टिकोण का फोकस होना चाहिए और इस प्रकार व्यापक दृष्टिकोण रखा जाए, इसका फोकस केवल प्रमुख कार्यपालक अधिकारी (सीईओ) और बोर्ड सदस्यों तक ही सीमित न रहे।
- पारिश्रमिक/प्रोत्साहन प्रणालियों का अभिशासन बहुधा विफल ही रहा है क्योंकि निर्णय और समझौते पर्याप्त दूरी रखते हुए नहीं किए जाते। कार्य निष्पादन आधारित पारिश्रमिक के स्तर और शर्तों पर मैनेजरों और अन्य का इतना प्रभाव रहता है कि बोर्ड अपने उद्देश्यपरक, स्वतंत्र निर्णय लेने में अक्षम या असहाय हो जाता है।
- कई मामलों में यह तथ्य चकित करने वाला रहा कि कार्यनिष्पादन और पारिश्रमिक के बीच का संबंध बहुत कमजोर था या इसका प्रतिपादन कठिन रहा। उदाहरण के लिए, कंपनियों ने कई बार फर्म विशेष के सापेक्षिक कार्यनिष्पादन के बजाय स्टॉक-कीमत के सामान्य उपाय का प्रयोग किया। सीईओ के नियंत्रण में न आने वाले घटकों पर कई बार जोर दिया गया।
- प्रतिपूर्ति की स्कीमें भी कई बार बहुत ही जटिल या इतनी दुर्बोध होती हैं कि स्थिति को छिपा लेती हैं। पेंशन योजनाओं का मूल्यांकन करने के मामले में तो यह विशेष रूप से कठिन हो जाता है। यह असंगत भी होती हैं जिनमें सीमित अधोगामी जोखिम होती हैं, जिनसे अधिकाधिक जोखिम उठाने को प्रोत्साहन मिलता है। पारदर्शिता बढ़ाने की जरूरत है, जिसका सीधा-सा आशय है अधिक से अधिक प्रकटीकरण, जिसमें हाल ही के वर्षों में सुधार हुआ है। कारपोरेशनों को अपने कार्यनिष्पादन से संबंधित प्रतिपूर्ति कार्यक्रमों के मुख्य लक्षणों का ब्यौरा सरल और गैर-तकनीकी शब्दों में देने में सक्षम होना चाहिए। इसमें कार्यक्रम की कुल लागत; प्रयोग में लाए गए कार्यनिष्पादन मानदंड, और संबंधित जोखिमों के लिए प्रतिपूर्ति के समायोजन की विधि शामिल होनी चाहिए।
- प्रतिपूर्ति/प्रोत्साहन प्रणालियों को इस प्रकार रखा जाए, जो दीर्घावधिक कार्य निष्पादन को प्रोत्साहन दें और इसके लिए ऐसी लिखतों की अपेक्षा होती है, जिनका भुगतान तभी प्राप्त किया जा सकता है, जब कार्यनिष्पादन का लाभ मिल जाए। इन लिखतों में नकदी के बजाय लॉक-इन प्रावधान वाले शेयर, क्लॉ-बैक, आस्थगित प्रतिपूर्ति आदि शामिल हैं। बाद में कार्यक्रम का वास्तविक आकलन महत्वपूर्ण है। इस प्रकार की स्कीमें जटिल होती हैं और यह संभव नहीं है कि कानूनी सीमाएं जैसे कैप्स और कुछ राजकोषीय उपाय इस प्रयोजन को प्राप्त कर सकें। यह भी जोखिम है कि तयशुदा प्रतिपूर्ति में बढ़ोतरी का सहारा ले लिया जाए जो कि कंपनी की दीर्घावधिक सफलता के साथ जुड़े हुए प्रोत्साहनों को कमज़ोर कर देगा।
- इसलिए यह सुनिश्चित करने के लिए कदम उठाने होंगे कि सुदृढ़ अभिशासन प्रक्रिया के माध्यम से प्रतिपूर्ति निर्धारित की जाए, जिसमें परामर्शदाताओं और स्वतंत्र निदेशकों सहित सभी लोगों की भूमिका और दायित्वों को स्पष्ट रूप से परिभाषित करके अलग-अलग बता दिया गया हो। कई बार पारिश्रमिक प्राप्त परामर्शदाताओं को नियुक्त करना पड़ सकता है और ऐसी नियुक्ति प्रबंधन के बजाए बोर्ड के नॉन एक्जीक्यूटिव सदस्यों द्वारा की जानी चाहिए। बोर्ड के कार्यपालक सदस्यों को इसमें शिरकत नहीं करनी चाहिए क्योंकि उनके हितों में आंतरिक संघर्ष हो सकता है।
- यदि प्रतिपूर्ति की नीतियों को वार्षिक बैठक में प्रस्तुत किया जाता है और शेयरधारकों के अनुमोदन से उचित ठहराया जाता है तो इसे अच्छी परिपाटी माना जाए।
- वित्तीय संस्थाएं फाइनान्शियल स्टेबिलिटी फोरम द्वारा जारी 'प्रिन्सिपल्स फॉर साउन्ड कम्पेनसेशन प्रैक्टिसेज़' का अनुसरण कर सकती हैं।

संदर्भः

किर्कपैट्रिक, ग्रान्ट (2009), दि कारपोरेट गवर्नेन्स : लैसन्स फ्रॉम दि फाइनान्शियल क्राइसेस, ओईसीडी आलेख। http://www.oecd.org/dataoecd/32/1/42229620.pdf

गया कि बासल-II फ्रेमवर्क में ट्रेडिंग बुक के लिए पूंजी की जरूरत को गंभीर रूप से कम आंका गया है। इसलिए, बासल समिति ने ट्रेडिंग बुक के लिए पूंजी के नए नियम निर्धारित किए हैं, जिनमें ट्रेडिंग बुक की पूंजी अपेक्षाओं को महत्वपूर्ण रूप से बढ़ा दिया गया है। इसमें पुनः प्रतिभूतिकरण और तुलनपत्रेतर माध्यमों के लिए उच्चतर पूंजी अपेक्षाओं का निर्धारण किया गया है। वित्तीय संकट के दौरान उजागर हुए बुक कीपिंग संबंधी मुद्दों के बारे में अंतरराष्ट्रीय लेखांकन मानक बोर्ड (आइएएसबी) की सहायता के लिए बैंकिंग पर्यवेक्षण पर बासल समिति ने दिशानिर्देशक सिद्धांतों का संग्रह जारी किया है (बॉक्स I.3)। इन प्रस्तावों में प्रावधानीकरण, उचित मूल्य आकलन और संबंधित प्रकटीकरण पर फोकस किया गया है।

विनियमन का भविष्य

1.23 बासल समिति ने तनाव परीक्षण और जटिल उत्पादों के मूल्य निर्धारण के साथ-साथ चलनिधि जोखिम निधीयन के प्रबंधन और पर्यवेक्षण के लिए सिद्धांत बनाए गए हैं। इसने पिलर 2 पर्यवेक्षकीय समीक्षा प्रक्रिया में एफएसबी के क्षतिपूर्ति मानकों को शामिल किया और ट्रेडिंग संबंधी क्रियाकलापों, प्रतिभूतिकरण और तुलनपत्र से इतर मदों के लिए जोखिम पर जोर देते हुए पिलर 3 के तहत प्रकटीकरण को बढ़ा दिया।

1.24 बैंकिंग क्षेत्र में विनियमन, पर्यवेक्षण और जोखिम प्रबंधन को सुदृढ़ बनाये जाने हेतु व्यापक उपायों की श्रृंखला की समीक्षा हेतु बैंकिंग पर्यवेक्षण पर बासल समिति के पर्यवेक्षीय निकाय के रूप में केंद्रीय बैंक

बॉक्स I.2 : बड़ी रकम के भुगतानों में वैश्विक प्रवृत्तियां और उनके प्रमुख चालक

प्रौद्योगिकीय नवोन्मेष, बैंकिंग में संरचनागत परिवर्तन और केंद्रीय बैंक की नीतियों में क्रमविकास - ये तीन प्रमुख कारण बड़ी रकमों के भुगतान में नये विकास का आधार रहे हैं। प्रथम, तो यह कि प्रौद्योगिकीय नवोन्मेष ने बड़ी-रकमों के भुगतान की विद्यमान प्रणाली को अधिक सुरक्षित और कुशल बनाने के अवसरों का सृजन किया। इन नवोन्मेषों ने नए प्रकार की प्रणाली के लिए बैंकिंग उद्योग की बढ़ती हुई जरूरतों को पूरा किया है जिससे यह प्रणाली किसी एक ही देश या एक ही मुद्रा तक सीमित नहीं रह गई है। दूसरे, यह कि विगत कुछ दशकों में वित्तीय क्षेत्र ने अत्यधिक वृद्धि का अनुभव किया है, जिसके साथ-साथ फर्म विशेष की भूमिका और उनके द्वारा प्रस्तुत किए जाने वाले उत्पादों में भी बदलाव आया है। इसके अलावा, वित्तीय संस्थाएं और उनकी सेवाएं अधिकाधिक वैश्विक बन चुकी हैं। इन संरचनागत परिवर्तनों ने सहभागियों द्वारा बड़ी-रकम के भुगतान की प्रणालियों के प्रयोग को प्रभावित किया है। तीसरे, हाल ही के वर्षों में बड़ी रकम की भुगतान प्रणालियों में केंद्रीय बैंकों की भूमिका में काफी परिवर्तन आया है। भुगतान प्रणालियों में केंद्रीय बैंक अधिकाधिक शामिल होते जा रहे हैं और औपचारिक तथा प्रणालीगत निरीक्षण कार्यों का सृजन कर चुके हैं। इनका मुख्य फोकस एलवीपीएस में सुरक्षा और दक्षता को बढ़ावा देने और समग्र वित्तीय स्थिरता को बरकरार रखने पर है। विद्यमान और योजनाबद्ध प्रणालियों की निगरानी, अंतरराष्ट्रीय मानकों के अनुसार प्रणालियों के आकलन और यदि आवश्यक हो तो परिवर्तन करने में केंद्रीय बैंकों ने अधिक सक्रिय भूमिका अपनाई है।

बड़ी रकम के भुगतानों के निपटान में वैश्विक स्तर पर दस प्रवृत्तियां ऐसी हैं जिनका दायरा काफी विस्तृत है। ये प्रवृत्तियां हैं : (1) तत्काल सकल भुगतान प्रणालियों का विस्तार शामिल करना, (2) संकरित प्रणालियों की शुरुआत, (3) क्रॉस-बार्डर और ऑफशोर प्रणालियों का उदय, (4) सतत सहयोजित निपटान बैंकों की शुरुआत, (5) वृद्धिशील निपटान मूल्य और मात्राएं, (6) औसत भुगतान का घटता आकार, (7) प्रणालीगत सहभागियों की घटती संख्या, (8) प्रचालन के बढ़े हुए घंटे, (9) लेनदेन की घटती फीस, और (10) बड़ी रकम वाली भुगतान प्रणालियों के लिए एकसमान मानकों को अपनाना।

आगामी गतिविधियां

प्रश्न यह है कि ये प्रवृत्तियां किस प्रकार विकसित होंगी और कौन-सी नई गतिविधियों का पूर्वानुमान लगाया जा सकता है।

- वर्तमान में आरटीजीएस का प्रसार भली प्रकार चल रहा है। आरटीजीएस और निवल निपटान प्रणालियां - दोनों की विशेषताएं इन्हें वांछनीय बनाती है, जब तक चलनिधि महंगी है तब तक आरटीजीएस का संकरीकरण चलता रहना संभावित है।
- बहुत से केंद्रीय बैंकों में कार्य दिवस के दौरान (इन्ट्रा डे) क्रेडिट के लिए भी सांपार्श्विक अपेक्षित है। वित्तीय बाजारों की बढ़ती गतिविधियों के साथ-साथ सांपार्श्विक को भी भुगतान निपटान की तुलना में अधिक लाभप्रद रूप से प्रयोग करना संभावित होगा। इससे चलनिधि की लागत बढ़ेगी और परिणामस्वरूप चलनिधि बचत के लिए मांग बढ़ेगी और यह आरटीजीएस के परिप्रेक्ष्य में नेटिंग और ऑफ सेटिंग से प्राप्त समायोजन से ज्यादा होगी। इसलिए प्रणालियों के अधिकाधिक संकरीकरण की प्रवृत्ति बने रहना संभावित है।
- क्रॉस-बॉर्डर प्रणालियों की शुरुआत यूरो की शुरुआत और सीएलएस बैंक की स्थापना से जुड़ी अद्वितीय घटनाओं से सम्बद्ध है। भविष्य में क्रॉस-बॉर्डर प्रणालियों का दुर्लभ हो जाना संभावित है। हालांकि दूरस्थ सहभागिता का अधिक प्रचलन हो सकता है। ऑफशोर प्रणालियां जिनमें विदेशी मुद्रा का निपटान किया जाता है, वर्तमान में छोटी हैं और विशिष्ट बाजारों का कारोबार संभालती हैं - खासतौर पर स्थानीय फॉरेक्स बाजार या किसी एक क्षेत्र और टाइमज़ोन के बैंकों की जरूरतों को पूरा करना, ताकि वे आपस में विदेशी मुद्रा में किए जाने वाले भुगतानों का निपटान कर सकें। नए वित्तीय केंद्रों की स्थापना के संदर्भ में इस प्रकार की मांग पैदा हो सकती है, उदाहरण के लिए मध्य पूर्व या चीन में, जहां पर प्यूपल्स बैंक ऑफ चायना द्वारा यूएसडी क्लीयरिंग प्रणाली तैयार की जा रही है।
- अधिकांश विद्यमान या योजनाबद्ध ऑफशोर प्रणालियां किसी देश विशेष तक सीमित हैं। सूचना और संचार प्रौद्योगिकी में विकास के साथ-साथ इस प्रकार की प्रणालियों पर आने वाली निश्चित लागत घटती जाती है। परिणामस्वरूप, हम देख सकेंगे कि और भी ऑफशोर प्रणालियां स्थापित होंगी, लेकिन संभावना है कि ये भी इस समय विद्यमान प्रणालियों की तरह विशिष्ट प्रकार के कारोबार ही करेंगी।
- निपटान मूल्यों में आगे चलकर जीडीपी की गति से ही सतत बढ़ोतरी संभावित है, और ये वित्तीय बाजार क्रियाकलापों के साथ अल्पावधि में चक्रीय रहेंगी - विगत दस वर्ष के दौरान ऐसा ही हुआ है। 1980 के दशक और 1990 के दशक के शुरुआती वर्षों में वित्तीय अविनियमन और नवोन्मेषों की वजह से मूल्यों में तेजी से हुई बढ़ोतरी काफी हद तक अवशोषित हो चुकी है। एलवीपीएस में प्रोसेस किए जा रहे भुगतानों का औसत वास्तविक मूल्य घट चुका है। लगता है कि लेनदेन पर आनेवाली कीमतें भी घटेंगी, तो यह आशा की जा सकती है कि तत्काल निपटान से मिलने वाले लाभ छोटे-छोटे वित्तीय लेनदेन के विभिन्न प्रकारों पर आने वाली लागत से अधिक होगा। इस प्रकार बड़ी रकम वाले भुगतानों के औसत मूल्य में लगातार गिरावट की आशा है।
- वित्तीय सेवाओं का लगातार समेकन हो रहा है। विशेषकर यूरोप में क्रॉस-बार्डर समामेलन की प्रक्रिया अभी शुरू नहीं हुई है। इसके अलावा, टारगेट-2 (TARGET2) की शुरुआत और यूरोपियन संघ की सभी आरटीजीएस प्रणालियों का समेकन करके एकल प्रणाली कर देने के बाद एलवीपीएस के सहभागियों की संख्या में गिरावट आएगी, क्योंकि यूरोपियन संघ के विभिन्न देशों में कार्यरत बैंक अपने भुगतानों का केंद्रीय स्तर पर बंदोबस्त करने की बेहतर स्थिति में हो जाएंगे।
- प्रणालियों से प्राप्त साक्ष्यों, जिनके बारे में कीमत संबंधी आंकड़े उपलब्ध हैं, से प्रकट होता है कि एलवीपीएस में किए जाने वाले भुगतानों की लागत में तेज गिरावट हुई है। इसके आंतरिक कारण नियामक परिवर्तनों, सूचना और संचार प्रौद्योगिकी की कम लागत, और कई देशों में शायद सरकारी और निजी प्रणालियों के एक साथ परिचालन के कारण आपसी प्रतिस्पर्धा के रूप में हैं। इन कारणों में बदलाव होने की संभावना नहीं है और भुगतान करने की लागत में कमी आने की संभावना है।
- अंतिम प्रवृत्ति यही होगी कि एक जैसे मानकों का प्रयोग करते हुए बड़ी-रकम के भुगतानों की प्रणालियों का मानकीकरण होगा। ''दि कोर-प्रिन्सिपल्स फॉर सिस्टेमिकली इम्पोर्टेन्ट पेमेन्ट सिस्टम्स'' को व्यापक रूप से स्वीकार किया जा चुका है, और विश्व भर में इसे लागू किया जाना जारी रहेगा।

संदर्भ:

फेडरल रिजर्व बैंक ऑफ न्यूयार्क (2008): इकॉनॉमिक पॉलिसी रिव्यू, सितंबर, वाल्यूम 14, नवम्बर 2: http://www.newyorkfed.org/research/epr/08v14n2/0809prei.pdf.

बॉक्स I.3 : लेखांकन सिद्धांतों पर बासल समिति (अध्यक्ष: नॉट वेल्लिंक)

वित्तीय संकट द्वारा संरेखित बुक कीपिंग मुद्दों के बारे में अंतरराष्ट्रीय लेखांकन मानक बोर्ड (आइएएसबी) की सहायता के लिए बैंकिंग पर्यवेक्षण पर बासल समिति ने दिशानिर्देशक सिद्धांतों का संग्रह जारी किया है। इन प्रस्तावों में प्रावधानीकरण, उचित मूल्य आकलन और संबंधित प्रकटीकरण पर फोकस किया गया है।

चूंकि आइएएसबी वित्तीय लिखतों के लिए लेखांकन के नए मानक तैयार करता है, इन सिद्धांतों की सहायता से ऐसे मानक तैयार हो सकेंगे जो निर्णय की उपयोगिता में सुधार और विवेकपूर्ण विनियामकों सहित प्रमुख पणधारियों के लिए वित्तीय रिपोर्टिंग की संगतता में सुधार करेंगे। इसके अलावा, इन सिद्धांतों से यह भी सुनिश्चित होगा कि अनुचक्रीयता और प्रणालीगत जोखिम के बारे में इन लेखांकन सुधारों में व्यवस्था है।

इन सिद्धांतों को तैयार करने में बासल समिति ने वित्तीय संकट से मिले सबक का बारीकी से परीक्षण किया है। जितने सबक मिले उनमें से एक यह भी है कि कोई भी नया लेखांकन नियम जोखिम प्रबंधन में सुदृढ़ संव्यवहारों के अनुरूप होना चाहिए और पर्यवेक्षकों, बैंकों, निदेशकों और अन्य पणधारियों को अपने-अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने में सहायता के लिए पारदर्शिता को बढ़ाने का कार्य करे।

ये सिद्धांत ''मूल्यांकन और प्रावधानीकरण संबंधी मानकों में सुधार और उच्च कोटि के वैश्विक लेखांकन मानकों का एकल संग्रह तैयार करने के लिए लेखांकन मानक निर्धारकों को तत्काल ही पर्यवेक्षकों और विनियामकों के साथ मिलकर कार्य करना चाहिए'' का ध्येय पूरा करने के लिए जी-20 में शामिल सरकार प्रमुखों द्वारा अप्रैल में की गई सिफारिश के अनुरूप हैं। आइएएसबी को ये सिद्धांत जुलाई में प्राप्त हुए।

सिद्धांतों में कहा गया कि नए मानक में निम्नलिखित को शामिल किया जाएः

- प्रबल प्रावधान सुनिश्चित करने के लिए कर्ज से होने वाली हानियों को शीघ्र समझने की जरूरत को प्रकट करें;
- यह ध्यान रखें कि जब बाजार विस्थापित या चलनिधि रहित हो गए हों तो उचित मूल्यांकन प्रभावी नहीं रह जाता है;
- उचित मूल्य के स्थान पर परिशोधित लागत वर्ग में पुनःवर्गीकरण करने की अनुमति; बिजनेस मॉडल में स्पष्ट रूप से परिवर्तन कर देने वाली घटनाएं होने के बाद इसकी अनुमति विरल परिस्थितियों में ही दी जाए; संपूर्ण अधिकार क्षेत्र में समस्तरीय कारोबारी अवसरों को बढ़ावा देना;
- यदि मूल्यांकन में महत्वपूर्ण अनिश्चितता हो तो प्रारंभिक और परवर्ती दोनों प्रकार के लाभ-हानि के परिज्ञान के बारे में गलत-विवरण से बचने के लिए मूल्यांकन समायोजनों के लिए प्रावधान करके अनुचक्रीयता के बारे में विशिष्ट चिंताओं पर ध्यान देना; और
- यह सुनिश्चित करना कि ऋण-हानि के प्रावधान प्रबल और ऐसी मजबूत क्रियापद्धतियों पर आधारित हैं, जो पोर्टफोलियो की समूची समयावधि में बैंकों के मौजूदा ऋण पोर्टपोलियो में संभावित क्रेडिट हानियों को दर्शाते हैं।

संदर्भ:

बैंक फॉर इन्टरनेशनल सेटलमेंट (2009), गाइडिंग प्रिन्सिपल्स फॉर दि रिप्लेसमेंट ऑफ आइएएस-39, अगस्त।

के गवर्नरों और पर्यवेक्षण प्रमुखों के दल की बैठक 6 सितंबर 2009 को आयोजित की गई। इन उपायों से आर्थिक और वित्तीय दबाव की तीव्रता और संभावना में पर्याप्त रूप से कमी आयेगी और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर बैंकिंग विनियमन और पर्यवेक्षण के नये मानकों की स्थापना के लिए इनकी आवश्यकता है। यह व्यापक-विवेकपूर्ण वातावरण की स्थापना की दिशा में किया गया प्रयास है जिसमें प्रतिचक्रीय पूंजी तथा प्रावधानन बफर के साथ-साथ प्रणालीगत, अंतर-संयुक्त बैंकों से पैदा होने वाली जोखिमों के समाधान हेतु उठाये जाने वाले व्यावहारिक कदम भी शामिल हैं (बॉक्स I.4)। यह भी महत्वपूर्ण होगा कि इन विनियमनों की पुनर्संरचना की आवश्यकता को दुहराते समय यह भी महत्वपूर्ण होगा कि इन विनियमनों को समयबद्ध और विश्वसनीय तरीके से लागू किए जाने हेतु पर्यवेक्षकों की क्षमता और इच्छा शक्ति पर जोर दिए जाने की आवश्यकता को भी ध्यान में रखा जाए। विनियमनों की पुनर्संरचना में समय लगने वाला है परंतु सही दिशा में चलने की इच्छाशक्ति मजबूत है।

अंतरराष्ट्रीय वित्तीय ढांचा

1.25 विभिन्न प्रयासों के जरिए अंतरराष्ट्रीय वित्तीय ढांचे में सुधार की प्रक्रिया को तेज कर दिया गया है और आगे चलकर इससे 21वीं सदी के अंतरराष्ट्रीय वित्तीय ढांचे को निर्माण होगा (बॉक्स I.5)।

1.26 अंत में कह सकते हैं कि, विकास और समृद्धि के लिए बढ़ते बाजार महत्वपूर्ण है, हाल की घटनाएं सुदृढ़ और प्रभावी विनियामक ढांचे और उचित पर्यवेक्षण के महत्व को दर्शाती हैं। वास्तव में, यह संकट बाजार और नीति दोनों की विफलता का परिणाम है। हमारे सम्मुख यह कार्य है कि एक सुदृढ़ अभिशासन और विनियामक ढांचे का निर्माण किया जाए जो एक ओर बाजारों और दूसरी ओर नीति हस्तक्षेपों के बीच एक स्वस्थ संतुलन बनाये रखने हेतु उत्प्रेरकों में तारतम्य बिठाने का कार्य करने के लिए, सरकारों को इनसे संबंधित संस्थाओं को सुदृढ़ बनाना होगा। वित्तीय संकट ने यह उजागर किया है कि पूंजी, जमा बीमा, कर प्रावधानों, कारपोरेट

बॉक्स I.4 : वैश्विक बैंकिंग संकट पर व्यापक प्रतिक्रिया केंद्रीय बैंक गवर्नरों और पर्यवेक्षण प्रमुखों का समूह, बासल

विश्व के 27 प्रमुख देशों के बीच समझौते किए गए और इनकी अनिवार्यता भी है क्योंकि ये वैश्विक स्तर पर बैंकिंग विनियमन और पर्यवेक्षण के लिए नए मानकों का निर्धारण करते हैं। एक सम्यक विवेकपूर्ण व्यवस्था की शुरुआत की दिशा में कार्य करने की जरूरत है, जिसमें प्रति-चक्रीय पूंजी-बफ़र के साथ-साथ प्रणालीगत, अंतर-संयुक्त बैंकों से होने वाली जोखिम से निपटने के लिए व्यावहारिक उपायों को शामिल किया गया है।

बैंकिंग क्षेत्र के विनियमन को मजबूत करने के लिए केंद्रीय बैंक गवर्नरों और पर्यवेक्षण प्रमुखों ने निम्नलिखित महत्वपूर्ण उपायों पर समझौता किया :

- टियर-1 पूंजी आधार की गुणवत्ता, अनुरूपता और पारदर्शिता को बढ़ाना। टियर-1 पूंजी में प्रमुख रूप में सामान्य शेयरों और प्रतिधारित आय को अवश्य शामिल किया जाए। बिना संयुक्त पूंजी वाली कंपनियों के लिए समुचित सिद्धांत तैयार किए जाएं, ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि इन कंपनियों के पास भी उच्च कोटि की टियर-1 पूंजी का तुलनीय स्तर है। इसके अलावा, कटौतियों और विवेकपूर्ण फिल्टरों को अंतरराष्ट्रीय रूप से सुमेलित किया जाए और बिना संयुक्त पूंजी वाली कंपनियों के मामले में इसे सामान्य इक्विटी के स्तर या इसके समतुल्य सामान्य रूप से लागू किया जाए। अन्ततः पूंजी आधार के सभी घटकों को पूरी तरह से प्रकट किया जाए।
- उचित समीक्षा और कैलिब्रेशन पर आधारित पिलर-1 व्यवस्था की तरफ बढ़ने की दृष्टि से बासल-II जोखिम आधारित संरचना के लिए अनुपूरक उपाय के रूप में लीवरेज अनुपात की शुरुआत करना। समतुल्यता सुनिश्चित करने के लिए लीवरेज अनुपात के विवरणों को अंतरराष्ट्रीय स्तर पर सुमेलित किया जाएगा, जिनमें लेखांकन विभेदों को पूरी तरह समायोजित किया गया हो।
- चलनिधि के लिए रकम जुटाने के लिए न्यूनतम वैश्विक मानक की शुरुआत करना जिसमें दीर्घतर अवधि के संरचनागत चलनिधि अनुपात का सहारा लेते हुए दबावग्रस्त चलनिधि कवरेज अनुपात की अपेक्षाएं शामिल हैं।
- न्यूनतम अपेक्षा के ऊपर प्रतिचक्रीय पूंजी-बफ़र के लिए व्यवस्था की शुरुआत करना। इस व्यवस्था में पूंजी संरक्षण उपाय शामिल होंगे, जैसे कि पूंजी वितरणों को संयमित करना। बासल समिति द्वारा अर्जन और क्रेडिट आधारित परिवर्तियों जैसे संकेतकों के समुचित समूह की समीक्षा की जाएगी, जिससे पूंजी बफर के संग्रह और इसमें से रकम लेने की शर्त का निर्धारण किया जाएगा। इसके अलावा, यह समिति संभावित हानियों को नजर में रखते हुए अधिक प्रगतिशील प्रावधानों का निर्धारण करेगी।
- सीमा-पार बैंकों की समस्याओं से जुड़ी प्रणालीगत जोखिम को कम करने के लिए सिफारिश करना।

यह समिति प्रणालीगत रूप से महत्वपूर्ण बैंकों की जोखिम को कम करने के लिए पूंजी पर सरचार्ज की जरूरत का आकलन भी करेगी। बासल समिति इन उपायों पर 2009 के अंत तक ठोस प्रस्ताव जारी करेगी। यह अगले वर्ष की शुरुआत में प्रभावों का आकलन करेगी, और साथ ही 2010 के अंत तक नई अपेक्षाओं के साथ कैलिब्रेशन पूरा हो जाएगा। इन नए उपायों को इस प्रकार समाहित किया जाना सुनिश्चित करने के लिए समुचित कार्यान्वयन मानक विकसित किए जाएंगे जो वास्तविक अर्थव्यवस्था को फिर से पटरी पर लाने में बाधक नहीं होंगे। सरकार द्वारा दी जानेवाली सहायता को सभी वर्तमान नियमों, विनियमों से छूट प्राप्त होगी।

समय के साथ-साथ इन उपायों के परिणामस्वरूप बैंकिंग प्रणाली में उच्चतर पूंजी और चलनिधि अपेक्षाएं और न्यूनतर लीवरेज, न्यूनतर अनुचक्रीयता, तनाव के प्रति बैंकिंग क्षेत्र में अधिकाधिक आघात-सहनीयता और सुदृढ़ प्रोत्साहनों का विकास होगा जिससे दीर्घावधिक कार्यनिष्पादन और विवेकपूर्ण जोखिम-बंदोबस्त के साथ समुचित रूप से सहयोजित प्रतिपूर्ति व्यवहार सुनिश्चित होगा।

बैंकिंग प्रणाली में पूंजी की गुणवत्ता और उच्चतर स्तर की ओर बढ़ना सुनिश्चित करने के लिए पर्यवेक्षकों का मार्गदर्शन करने के लिए गवर्नरों और पर्यवेक्षण प्रमुखों के समूह ने निम्नलिखित सिद्धांतों की प्रतिपुष्टि की :

- प्रतिचक्रीय पूंजी बफ़र के लिए व्यवस्था तैयार करते समय पर्यवेक्षकों को बैंकों से यह अपेक्षा करनी चाहिए कि वे अतिशय लाभांश भुगतान, शेयरों की वापसी खरीद और प्रतिपूर्ति को सीमित करने की कार्रवाई सहित पूंजी संरक्षण उपायों के संयोजन से अपने पूंजी आधार को मज़बूत बनाएं।
- वित्तीय स्थिरता बोर्ड (एफएसबी) के प्रतिपूर्ति संबंधी सुदृढ़ सिद्धांतों के आधार पर निर्धारित प्रतिपूर्ति को विवेकपूर्ण जोखिम-व्यवस्था और दीर्घावधिक निर्वहनीय कार्य निष्पादन के साथ समायोजित किया जाए।
- बैंकों से अपेक्षा रहेगी कि वे पूंजी के स्तर और गुणवत्ता को नए मानकों तक जाने के लिए तेजी से बढ़ें, लेकिन ऐसे तरीके अपनाते हुए जो राष्ट्रीय बैंकिंग व्यवस्था और व्यापक अर्थव्यवस्था की स्थिरता को बढ़ाएं।

पर्यवेक्षक यह सुनिश्चित करेंगे कि उनके अधिकार क्षेत्र में आने वाले बैंकों के लिए पूंजी संबंधी योजना इन सिद्धांतों के अनुरूप है।

संदर्भः

बैंक फॉर इन्टरनेशनल सेटलमेन्ट्स (2009), कम्प्रीहेन्सिव रेसपॉन्स टू दि ग्लोबल बैंकिंग क्राइसेस, बीआइएस, प्रेस रिलीज, दिनांक 7 सितंबर।

अभिशासन, प्रतिस्पर्धा नीति, लेखांकन नियमों और कार्यपालक को दी जाने वाली प्रतिपूर्ति के बीच गहरी अंतर-संयुक्तता है, जो समग्र रूप से ऐसा वातावरण तैयार करते हैं, जिसमें जोखिम उठाने की प्रवृत्ति उत्पन्न होती है।

बॉक्स I.5: वैश्विक वित्तीय ढांचे में सुधार

आर्थिक सहयोग के वर्तमान संस्थागत ढांचे की डिज़ाइन 1940 के दशक में युद्ध के संदर्भ में राष्ट्रों के बीच शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व को बढ़ावा देने हेतु की गयी थी, जिसके परिणामस्वरूप ब्रिटन वुडस् संस्थाओं, नामतः अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष (आइएमएफ) तथा उसकी सहयोगी संस्था विश्व बैंक की स्थापना हुई। वर्तमान वैश्विक संकट के परिणामस्वरूप अंतरराष्ट्रीय आर्थिक ढांचे के निर्माण एवं उसके सुदृढ़ीकरण हेतु हाल में अंतरराष्ट्रीय स्तर पर उल्लेखनीय प्रयास किए गए हैं।

यह उल्लेखनीय है कि एशियाई संकट ने वैश्वीकरण के लाभ तथा हानियों और अंतरराष्ट्रीय वित्तीय ढांचे को सुदृढ़ करने की जरूरतों के बारे में एक व्यापक तथा महत्वपूर्ण बहस छेड़ दी थी। 1999 में, वित्तीय बाजार पर्यवेक्षण तथा निगरानी के संबंध में सूचनाओं के अदान-प्रदान के बढ़े हुए स्तर तथा अंतरराष्ट्रीय सहयोग के जरिए अंतरराष्ट्रीय वित्तीय प्रणाली में स्थिरता को बढ़ावा देने के लिए वित्तीय स्थिरता फोरम (एफएसएफ) की स्थापना की गयी जिसके अंतर्गत अंतरराष्ट्रीय वित्तीय प्रणाली को प्रभावित करने वाली जोखिमों तथा संवेदनशीलताओं के आकलन तथा इनके समाधान हेतु समन्वित प्रोत्साहनों को बढ़ावा देने का दायित्व 12 सदस्य देशों को दिया गया। इसने जी-7 के देशों, ऑस्ट्रेलिया, हांगकांग, नीदरलैंड, सिंगापुर तथा स्विटज़रलैंड के राष्ट्रीय वित्तीय प्राधिकारियों (केन्द्रीय बैंक, पर्यवेक्षी प्राधिकारी तथा वित्त मंत्रालय) तथा अंतरराष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं, अंतरराष्ट्रीय विनियामक तथा पर्यवेक्षी समूहों, केन्द्रीय बैंकों की विशेषज्ञों की समिति तथा यूरोपियन केन्द्रीय बैंक को लेकर महत्वपूर्ण अंतरराष्ट्रीय वित्तीय केन्द्रों में वित्तीय स्थिरता के लिए जिम्मेदार राष्ट्रीय प्राधिकारियों, अंतरराष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं, विनियामकों तथा पर्यवेक्षकों के सेक्टर विशेष के अंतरराष्ट्रीय समूहों तथा केन्द्रीय बैंक के विशेषज्ञों की समितियों को एक साथ लाने का कार्य किया।

2007 के मध्य में अंतरराष्ट्रीय वित्तीय ढांचे के संबंध में महत्वपूर्ण मुद्दा ठअभिशासनड, विशेष रूप से आइएमएफ के अभिशासन का था जिसमें अन्य बातों के साथ-साथ भावी प्रबंध निदेशक के चयन, कार्यकारी मंडल में प्रतिनिधित्व तथा मतदान का अधिकार शामिल था। आइएमएफ की ''वैधता'' कथित रूप से संदेह के घेरे में आ गई। 2007 के मध्य से स्थिति में काफी बदलाव आ गया है। विश्वव्यापी मंदी की संभावना ने 'अभिशासन सुधार' के विषय को पीछे धकेल दिया तथा अंतरराष्ट्रीय वित्तीय प्रणाली में उल्लेखनीय रूप से तत्काल सुधार की जरूरत को प्रोत्साहित किया। वर्तमान संकट ने अंतरराष्ट्रीय वित्तीय ढांचे में सुधार की गति को तीव्र किया।

अंतरराष्ट्रीय वित्तीय ढांचे में सुधार के प्रयासों को दो श्रेणियों में बांटा जा सकता है; प्रथम, संसाधनों में वृद्धि तथा अंतरराष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं की लिखतों में संशोधन, तथा द्वितीय, अंतरराष्ट्रीय वित्तीय प्रणाली को सुदृढ़ करना। की गयी अथवा की जा रही प्रमुख कार्रवाइयां निम्नानुसार हैं:

- *आइएमएफ से वित्तीय सहायता की मांगः* 2003 के अंत से चल रहे निरंतर संकुचन के कारण आइएमएफ के गैर-रियायती ऋण की मात्रा घटकर मार्च 2008 में लगभग 6 बिलियन विशेष आहरण अधिकार (एसडीआर) हो गयी जो कि 7 बिलियन यूरो के बराबर है। वित्तीय सहायता हेतु सदस्यों देशों द्वारा किए गए आवेदनों की संख्या में हुई वृद्धि से 2008 की दूसरी छमाही तथा 2009 के पहले कुछ माह के दौरान वैश्विक आर्थिक परिदृश्य की बिगड़ती स्थिति की झलक मिलती है। आइएमएफ ने लगभग 100 बिलियन एसडीआर (115 बिलियन यूरो) की 19 नई ऋण सुविधाओं का अनुमोदन किया।

- *आइएमएफ की उधार क्षमता में वृद्धिः* आइएमएफ से वित्तीय सहायता की मांग में हुई वृद्धि को देखते हुए जी-20 ने अप्रैल 2009 में आइएमएफ द्वारा दिए जाने वाले गैर-रियायती ऋण की अधिकतम राशि को 250 बिलियन अमरीकी डॉलर से तीन गुना बढ़ाकर 750 बिलियन अमरीकी डॉलर कर दिए जाने संबंधी प्रस्ताव का अनुमोदन कर दिया है।

  - उधार देने की क्षमता में द्विपक्षीय ऋण करारों तथा उधार की नई व्यवस्था (एनएबी) द्वारा उपलब्ध करायी गयी राशि भी शामिल है। प्रारंभ में, इसमें से लगभग आधी राशि द्विपक्षीय ऋणों के जरिए उपलब्ध करायी जाएगी और यह राशि जापान (100 बिलियन अमरीकी डॉलर), ईयू के देश (100 बिलियन अमरीकी डॉलर, निधि के कोटे में संबंधित अंशदान के आधार पर), स्विटज़रलैंड तथा कनाडा (प्रत्येक द्वारा 10 बिलियन अमरीकी डॉलर) तथा नॉर्वे (4.5 बिलियन अमरीकी डॉलर) द्वारा दी जाएगी। बाद में, इन ऋणों को एनएबी में शामिल किया जाएगा तथा नये सहभागियों को भी यह सुविधा दी जाएगी एवं 250 बिलियन अमरीकी डॉलर तक का अंशदान करके इस राशि में बढ़ोतरी की जाएगी। हाल में, अमरीका ने बढ़ाई गयी नयी उधार व्यवस्था में 100 बिलियन अमरीकी डॉलर तक का अंशदान करने का वचन दिया है।
  - अगली सामान्य कोटा समीक्षा को जनवरी 2011 में लाने का निर्णय लिया गया ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि सदस्यों की वित्तीय जरूरतों को पूरा करने के लिए मध्यावधि में भी कोष के पास पर्याप्त संसाधन उपलब्ध हो।

- *विशेष आहरण अधिकार का नया आबंटनः* जी-20 ने 250 बिलियन अमरीकी डॉलर के बराबर एसडीआर के नये सामान्य आबंटन का अनुमोदन करने का वचन दिया है जिसमें से 100 बिलियन अमरीकी डॉलर की राशि उभरते तथा विकासशील देशों के लिए होगी।

- *आइएमएफ के उधार संबंधी साधन(टूलकिट) में संशोधनः* वैश्विक अर्थव्यवस्था की बिगड़ते हालात को ठीक करने के लिए आइएमएफ ने अपने उधार देने संबंधी साधनों में व्यापक संशोधन करना शुरू कर दिया है। किए जाने वाले प्रमुख सुधार निम्नलिखित से संबंधित हैंः (क) वे शर्तें जिन्हें निधि से संसाधन प्राप्त करने के लिए देशों द्वारा पूरा किया जाना आवश्यक है; (ख) नयी सुविधा, लचीली ऋण सुविधा (एफसीएल) का अनुमोदन, तथा कभी-कभार उपयोग होने वाली सुविधाओं को समाप्त करना; (ग) निधि की पारंपरिक एवजी व्यवस्था के उपयोग के संबंध में अधिक लचीलापन लाना; (घ) लागत तथा परिपक्वता ढांचे का सरलीकरण; तथा (ङ) पहुंच सुविधा को दुगुना करना। साधारण संसाधनों तक पहुंच की सीमा को वार्षिक आधार पर 100 प्रतिशत से दुगुना करके देश के कोटे का 200 प्रतिशत तथा तीन वर्षीय आधार पर 600 प्रतिशत किया गया।

(जारी ....)

(.... समाप्त)

- *संकट की रोकथाम संबंधी मानदंडों के आधार पर लचीली ऋण सुविधा:* यह सुविधा कोई संकट न होने पर भी पूर्णतः एहतियाती प्रयोजनों के लिए छह माह अथवा एक वर्ष के लिए उल्लेखनीय मात्रा की राशि उन देशों को प्रदान करने में सहायता करती है जिनकी आर्थिक संरचना सुदृढ़ है तथा जिनमें बेहतर नीतिगत व्यवस्थाएं स्थापित हैं। एक बार मंजूर होने के बाद संबंधित देश एफसीएल से बिना और किसी शर्त के, संभवतः एक बार में, राशि का आहरण कर सकता है। यह सुविधा नवीकरणीय है तथा अन्य साधारण ऋण सुविधाओं की तुलना में इस सुविधा तक पहुंच की कोई सीमा नहीं है।

- *लागत तथा ऋण चुकौती के परिपक्वता ढांचे को सरल बनाना:* ऋण की चुकौती समयपूर्व करने हेतु प्रोत्साहित करने के लिए प्रारंभ की गयी प्रशासनिक व्यवस्था, विशेष रूप से 'समय आधारित पुनर्खरीद प्रत्याशा नीति' का प्रतिस्थापन चुकौती संबंधी अनुसूची को सरल बनाते हुए समय आधारित सरचार्ज नीति के द्वारा किया गया है।

- *बहुपक्षीय विकास बैंकों के संबंध में प्रयास:* जी-20 ने कम आय वाले देशों के अर्थिक संकट के असर को कम करने के लिए इन देशों की जरूरतों पर विशेष ध्यान देते हुए तथा संसाधनों के संवितरण को त्वरित करने के उद्देश्य से बहुपक्षीय विकास बैंकों (एमडीबी) की वित्तपोषण क्षमता को सुदृढ़ करने तथा नई लिखतों के विकास को प्रोत्साहित करने का निर्णय लिया है।

अंतरराष्ट्रीय वित्तीय प्रणाली को सुदृढ़ करने के संबंध में दूसरी श्रेणी के अंतर्गत किए गए प्रमुख प्रयास निम्नानुसार हैं:

- *वित्तीय स्थिरता बोर्ड:* जी-20 ने मार्च तथा अप्रैल 2009 में निर्णय लिया कि वित्तीय स्थिरता फोरम (एफएसएफ) को विस्तारित करके सुदृढ़ संस्थागत आधार पर वित्तीय स्थिरता बोर्ड (एफएसबी) के रूप में उसकी पुनर्स्थापना की जाए। जी-20 के सभी देशों (जी-20 के नए सदस्यों, जो एफएसएफ के सदस्य नहीं थे, नामतः अर्जेंटीना, ब्राजील, चीन, भारत, इंडोनेशिया, कोरिया, मेक्सिको, रूस, सऊदी अरब, दक्षिण अफ्रीका तथा तुर्की) को शामिल करने के लिए एफएसबी में सहभागिता को विस्तारित किया गया। इसके अतिरिक्त, स्पेन तथा यूरोपियन कमीशन भी एफएसएफ के सदस्य बन गए। अप्रैल 2009 में वित्तीय स्थिरता को बढ़ावा देने के व्यापक उद्देश्य के साथ विस्तारित एफएसएफ की वित्तीय स्थिरता बोर्ड के रूप में पुनर्स्थापना की गयी। यह वित्तीय स्थिरता के हित में सुदृढ़ विनियामक, पर्यवेक्षी तथा अन्य नीतियों का निर्माण करने तथा उन्हें लागू करने के साथ-साथ संवेदनशीलताओं के समाधान हेतु राष्ट्रीय प्राधिकारियों, मानक निर्धारक संस्थाओं (एसएसबी) तथा अंतरराष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं के लिए एक माध्यम की भूमिका सहित एक सुदृढ़ संस्थागत आधार उपलब्ध कराएगी। एफएसबी तथा आइएमएफ, अपने पूर्वगामी को निर्धारित किए गए कार्यों के अलावा, एक दूसरे की भूमिका में मदद पहुंचाते हुए पूर्व चेतावनी संबंधी कार्य करने के साथ-साथ वित्तीय जोखिमों तथा संवेदनशीलताओं के विश्लेषण हेतु आपस में समन्वय करेंगे।

- *पर्यवेक्षण तथा वित्तीय मानकों के क्षेत्र संबंधी उपाय:* प्रणालीगत रूप से महत्वपूर्ण सभी संस्थाएं, लिखतें तथा बाजार समुचित विनियमन तथा पर्यवेक्षण के अधीन होने चाहिए। व्यापक विवेकपूर्ण पर्यवेक्षण की प्रणाली में सुधार किया जाएगा।

- *आइएमएफ तथा विश्व बैंक में प्रतिनिधित्व एवं अभिशासन के ढांचे में सुधार:* जी-20 ब्रिटन वुड संस्थाओं के अभिशासन में प्रभावी सुधार पर बल देता है। इसका लक्ष्य गरीब तथा उभरते देशों को निर्णय लेने की प्रक्रिया में अधिक भागीदारी देना, उच्च प्रबंधन तंत्र के चयन के मानदंडों में परिवर्तन करना तथा संस्थानों के नियामक संस्थाओं तथा तकनीकी स्टाफ के बीच कार्यों तथा दायित्वों के विभाजन को स्पष्ट करना है।

- *विकासशील देशों के प्रतिनिधित्व को सुदृढ़ करने के उद्देश्य से विश्व बैंक द्वारा प्रक्रिया की शुरुआत:* फोरम दो चरणों में विभाजित है। प्रथम चरण की शुरुआत पहले ही हो चुकी है जिसमें मूल मतदान को दुगुना करने, आबंटित न किए गए कुछ शेयरों का समनुदेशन करने तथा अफ्रीका के उप सहारा क्षेत्र के लिए बोर्ड में एक अतिरिक्त स्थान रखने संबंधी बातें शामिल हैं। दूसरे चरण में संबंधित देशों की वैश्विक अर्थव्यवस्था में तुलनात्मक महत्व तथा विकास वित्तपोषण के क्षेत्र में उनके योगदान के आधार पर सदस्य देशों के मतदान के अधिकार को संशोधित करना शामिल है; यह बोर्ड के कार्यकलापों की प्रभावकारिता, विश्व बैंक के स्टाफ को राष्ट्रिकता के आधार पर रखने तथा अध्यक्ष के चयन की प्रक्रिया जैसे अभिशासन से जुड़े नाजुक मुद्दों को सुलझाएगा।

इन संस्थाओं के भावी अधिकार, प्रभावकारिता तथा विश्वसनीयता हेतु स्पष्ट सुधारों की जरूरत है ताकि गतिशील उभरती अर्थव्यवस्थाओं तथा विकासशील देशों से जुड़े मुद्दों को पर्याप्त महत्व मिल सके। इस बात पर सहमति हुई कि जिन देशों का आइएमएफ में अनुपात से अधिक प्रतिनिधित्व है उनके कम-से-कम 5 प्रतिशत कोटे को कम प्रतिनिधित्व वाले देशों को अंतरित कर दिया जाएगा। इस सुधार से वर्तमान वैश्विक अर्थव्यवस्था में उनके महत्व के स्तर के अनुसार गतिशील उभरते बाजार तथा विकासशील अर्थव्यवस्थाओं को आइएमएफ में अपनी बात रखने का अवसर मिलेगा। इस बात पर भी सहमति हुई कि विश्व बैंक में उभरते बाजार तथा विकासशील देशों के मतदान के अधिकार में कम-से-कम 3 प्रतिशत की वृद्धि की जाए। इससे वैश्विक गरीबी को कम करने तथा जलवायु परिवर्तन तथा खाद्य सुरक्षा से जुड़ी चुनौतियों से निपटने, जिनके लिए वैश्विक स्तर पर समन्वित कार्य करने की जरूरत है, में विश्व बैंक की क्षमता में वृद्धि होगी। उभरते अंतरराष्ट्रीय वित्तीय ढांचे में जी-20 एक दूसरे से जुड़ी वैश्विक अर्थव्यवस्था की जरूरतों को पूरा करने के लिए वैश्विक आर्थिक संस्थाओं में सुधार हेतु एक अग्रणी वैश्विक आर्थिक फोरम के रूप में उभरा है।

संदर्भ:

वित्तीय स्थिरता फोरम (2009), 12 मार्च तथा 2 अप्रैल 2009 की प्रेस प्रकाशनी।

बेंका द' इटालिया (2009), 115 वीं वार्षिक रिपोर्ट, 29 मई । http://www.pittsburghsummit.gov

3. भारतीय परिप्रेक्ष्य

1.27 आधुनिक आर्थिक प्रणाली भी मध्यस्थों के जरिए वित्तपोषण के विश्वसनीय स्रोत पर निर्भर है। आधुनिक जीवन में बैंकों, बीमा कंपनियों, प्रतिभूति का कारोबार करने वाली फर्मों, म्यूच्युअल फंडों, वित्त कंपनियों, पेंशन निधियों और सरकारों के निर्बाध परिचालन की अपेक्षा की जाती है। ये संस्थाएं बचत करने वालों से संसाधन जुटाकर निवेश करने वालों तक पहुंचाती हैं और उनसे आशा की जाती है कि वे जोखिम वहन न कर सकने वाले लोगों से, जोखिम वहन करने के इच्छुक एवं समर्थ लोगों की तरफ जोखिम अंतरित करें। भारत में भी काफी वैविध्यपूर्ण वित्तीय प्रणाली विद्यमान है, जिसमें अभी तक बैंक की मध्यस्थता का बोलबाला है, जबकि 1990 के प्रारंभ से शुरू हुए आर्थिक उदारीकरण से पूंजी बाजार का आकार उल्लेखनीय रूप से बढ़ गया है। भारत में वित्तीय क्षेत्र के महत्वपूर्ण घटकों को मोटे तौर पर इन श्रेणियों में बांटा जा सकता है; वाणिज्यिक बैंक, सहकारी बैंक, गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाएं (एनबीएफआइ) और बीमा क्षेत्र। भारत की वित्तीय संस्थाओं की कुल आस्तियों का 70 प्रतिशत भाग वाणिज्यिक बैंकों और सहकारी बैंकों द्वारा सम्मिलित रूप से रखा जाता है।

1.28 क्रेडिट-जीडीपी, एम3-जीडीपी अनुपातों के साथ-साथ निधि प्रवाह संकेतकों से यह देखा जा सकता है कि कई वर्षों से भारतीय अर्थव्यवस्था में उल्लेखनीय रूप में वित्तीय सघनता आती जा रही है। कई देशों के विपरीत, भारतीय परिप्रेक्ष्य में उल्लेखनीय रूप से यह लक्षण विचारणीय है कि वित्तीय सघनता के संकेतकों में वृद्धि होने के साथ-साथ घरेलू बचत दर में भी उल्लेखनीय रूप से वृद्धि हुई है। वित्तीय क्षेत्र के सुधारों, कुल समग्र उत्पादकता में वृद्धि और निवेश में आयी तेजी की पृष्ठभूमि में हाल ही की अवधि के दौरान वर्ष 2003-04 से 2007-08 तक देशी बचत दर में विशेष रूप से वृद्धि हुई है।

1.29 जैसा कि बाद में अध्याय II में चर्चा की गई है, बैंकिंग प्रवृत्तियों में अंतरराष्ट्रीय स्तरों के विपरीत भारत में महत्वपूर्ण विरोधाभासों के लक्षण हैं। भारतीय बैंकिंग पर इस संकट का कम प्रभाव पड़ने की बात दो तत्वों से स्पष्ट हो जाती हैः (i) भारतीय बैंकों की विदेश स्थित शाखाओं को सब प्राइम बंधक के कारण प्रत्यक्ष जोखिम से होने वाले प्रभाव नाममात्र के हैं। हालांकि, विदेश स्थित शाखाओं वाले कुछ भारतीय बैंकों ने संपार्श्विकीकृत ऋण दायित्व (सीडीओ) पत्रों/बांडों में निवेश किया था, जिनमें से कुछेक के साथ सब-प्राइम जोखिम वाली संस्थाएं अन्तर्निहित थीं। इस प्रकार बाजार मूल्य आधारित मूल्यांकन से हुई हानियों के कारण कुछ बैंकों को नुकसान हुआ, क्योंकि क्रेडिट स्प्रेड का दायरा बढ़ जाने के कारण सावधि चलनिधि बाजार पर सब प्राइम प्रकरण का प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। तथापि, संबंधित बैंकों के तुलनपत्रों और लाभ के स्तर की तुलना में क्रेडिट स्प्रेड के बढ़े हुए दायरे से उत्पन्न बाजार मूल्य आधारित मूल्यांकन के कारण हुई हानियों के लिए प्रावधानीकरण की अपेक्षाएं बहुत महत्व नहीं रखती थी। (ii) अनुमान लगाया गया है कि भारतीय स्टाक बाजार पर विदेशी संकट का अप्रत्यक्ष प्रभाव और इसके परिणामस्वरूप इक्विटी निवेशों के प्रति भारतीय बैंकों के संदर्भ में पड़ने वाले प्रभाव न्यूनतम हैं क्योंकि पूंजी बाजारों के प्रति बैंकों की जोखिम के बारे में विवेकपूर्ण सीमाएं विधिवत लागू हैं। अप्रैल 2007 से पूंजी बाजार जोखिम से संबंधित औचित्यपूर्ण मानदंडों के लागू हो जाने के साथ ही पूंजी बाजार में एकल बैंक की कुल जोखिम की उच्चतम विनियामक सीमा को विगत वर्ष के मार्च के अंत की स्थिति के अनुसार बैंक की निवल मालियत का 40 प्रतिशत कर दिया गया है। इसके अलावा, शेयरों, परिवर्तनीय बांड/ऋण पत्रों, इक्विटी अभिमुख म्यूच्युअल फंडों की यूनिटों में बैंकों के प्रत्यक्ष निवेश और उद्यम पूंजी निधियों में सभी जोखिमों की सीमा निवल मालियत के 20 प्रतिशत से अधिक नहीं होनी चाहिए। रिज़र्व बैंक द्वारा निर्धारित विभिन्न विनियामक अपेक्षाओं में यह सुनिश्चित किया गया है कि पूंजी बाजार में बैंकों की सहभागिता सीमाओं के भीतर रहती है।

1.30 इसके अलावा, बैंकिंग प्रणाली में ऋण देने की क्षमता के बारे में यह उल्लेखनीय है कि अंतरराष्ट्रीय संकट का उदय होने से पहले भारतीय बैंकिंग क्षेत्र में क्रेडिट विनियोजन के साथ-साथ उच्च क्रेडिट वृद्धि रही, जिसमें तीन वर्ष के दौरान औसत लगभग 30 प्रतिशत वार्षिक की दर से वृद्धि हुई। बैंक क्रेडिट वृद्धि और कतिपय खंडों में आस्ति बुलबुलों के निर्माण को नरम करने के लिए भारतीय रिज़र्व बैंक ने मौद्रिक और प्रतिचक्रीय विवेकपूर्ण उपायों का एक सतर्क और न्यायपूर्ण संयोजन तैयार किया है।

1.31 भारतीय बैंकिंग प्रणाली सापेक्षतया अच्छी हालत में है। बैंकों के तुलनपत्र मजबूत प्रतीत हो रहे हैं और वित्तीय बाजारों में असमायोजित स्थितियों से बहुत कम ही प्रभावित हुए हैं। भारतीय बैंकिंग प्रणाली की आस्ति गुणवत्ता और मानदंडों की सुदृढ़ता विगत अवधि में महत्वपूर्ण रूप से समुन्नत हुई है।

1.32 वित्तीय क्षेत्र मूल्यांकन समिति (2009) के अनुसार, इन सबके बावजूद भारतीय बैंकों की वित्तीय स्थिति दिखाती है कि वैश्विक बाजारों में वित्तीय गिरावट ने भरोसे पर भी संकट पैदा कर दिया है और इसकी कुछ प्रतिध्वनि भारतीय वित्तीय प्रणाली में भी सुनाई दी है। 2007-08 तक देखी गयी प्रवृत्ति के विपरीत 2008-09 के दौरान भारत को होने वाले पूंजी प्रवाह की दिशा बदल गयी थी। इससे भारतीय वित्तीय बाजारों में कुछ व्यवधान पैदा हुए, खासकर इक्विटी और विदेशी मुद्रा विनिमय बाजारों में। इस पृष्ठभूमि में वित्तीय क्षेत्र मूल्यांकन समिति ने वाणिज्यिक बैंकों की वित्तीय मजबूती का आकलन किया और पाया कि बैंकिंग क्षेत्र ने वैश्विक गिरावट के झटकों को झेल लिया है और सितंबर 2008 में इसके प्रमुख वित्तीय मानदंडों अर्थात् पूंजी अनुपात, आस्ति गुणवत्ता, आय और लाभप्रदता में से किसी पर भी कोई उल्लेखनीय आघात नहीं पहुंचा है।

1.33 वित्तीय क्षेत्र की इस समस्या का एक हिस्सा नहीं होने के बावजूद भारत पर भी इस संकट का प्रभाव पड़ा है, जो वित्तीय वास्तविक तथा विश्वास चैनलों के कारण हए बाह्य आघातों और घरेलू दुर्बलताओं के प्रतिसूचना चक्र के माध्यम से था। इस संकट के प्रत्युत्तर में की गई कार्रवाई का मूल्यांकन करते समय यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि यद्यपि समूचे विश्व में संकट का उद्गम एकसमान रूप से हुआ, फिर भी विभिन्न अर्थव्यवस्थाओं पर इस संकट का प्रभाव अलग-अलग रूप में पड़ा। इस तथ्य पर खास ध्यान देना होगा कि जिन उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में यह संकट पैदा हुआ वहां इसका प्रसार वित्तीय क्षेत्र से वास्तविक क्षेत्र की ओर रहा। उदीयमान अर्थव्यवस्थाओं में स्वदेशी दुर्बलताओं पर इस बाह्य आघात का प्रभाव यथारूप वास्तविक क्षेत्र से वित्तीय क्षेत्र की ओर रहा। अपने-अपने देश-विशेष की परिस्थितियों के आधार पर सभी देशों ने इस संकट मुकाबला किया। इस प्रकार, वैसे तो अलग-अलग देशों में नीतिगत उपाय मोटे तौर पर एक जैसे रहे हैं, तथापि उनका परिशुद्ध डिजाइन, मात्रा, क्रमबद्धता और सामयिकता में भिन्नता रही। विशेष तौर पर, जहां उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में नीतिगत उपायों का ध्यान वित्तीय संकट और गहराती जा रही मंदी को रोकने पर रहा वहीं भारत में नीतिगत उपायों का प्रमुख ध्यान आर्थिक वृद्धि में गिरावट को रोकने पर रहा।

1.34 सितंबर 2008 के मध्य के बाद किए गए उपायों से यह सुनिश्चित किया गया है कि भारतीय वित्तीय बाजार व्यवस्थित ढंग से कार्य करते रहें। इस उपयुक्त आकार की चलनिधि उपलब्ध कराने हेतु किए गए उपायों ने नवंबर 2008 के मध्य से सहज चलनिधि स्थिति सुनिश्चित कर दी है, जैसा कि भारित औसत मांग मुद्रा दर, और 10 वर्षीय बेंचमार्क सरकारी प्रतिभूतियों के प्रतिफल और वाणिज्यिक बैंकों की प्रभावी उधार-दरों से स्पष्ट है।

1.35 पीछे मुड़कर देखें तो भारत में 1990 के दशक के प्रारंभ में शुरू किए गए वित्तीय क्षेत्र सुधारों की महत्वपूर्ण सफलता यह रही कि समूचे विश्व में बारंबार हुए वित्तीय संकटों की अवधि में भी यहां की वित्तीय स्थिरता बरकरार रही। समय का तकाजा तो यही है कि संकट के परिप्रेक्ष्य में वित्तीय क्षेत्र सुधारों को सुनियोजित ढंग से आगे बढ़ाया जाए। यह तथ्य भी उल्लेखनीय है कि वित्तीय विनियंत्रण के परिणामस्वरूप भारत में कोई वित्तीय संकट नहीं हुआ, लेकिन इससे इस निर्णय के औचित्य के प्रमाण भी हैं कि वैश्विक मानकों में हो रहे सुधारों को स्थानीय परिस्थितियों के अनुरूप समायोजित करने की जरूरत है।

1.36 भारत ने क्रेडिट की अतिशय वृद्धि की अवधि के दौरान विवेकपूर्ण प्रतिचक्रीय उपाय लागू कर दिए गए थे। इस तथ्य को समझते हुए कि घटनाओं के अचानक और बड़े परिवर्तन से आस्तियों का मूल्य सामान्य से नीचे जा सकता है, कुछ प्रतिचक्रीय उपायों जैसे उच्चतर जोखिम भार और बहुत ज्यादा क्रेडिट वृद्धि दर्शाने वाले कतिपय क्षेत्रों में प्रावधानीकरण अपेक्षाएं, जिन्हें 2006 में लागू किया गया था, पुनः मूल स्तरों पर तय कर दी गईं। बाह्य स्थितियों में अचानक और तीव्र गिरावट से प्रभावित आस्तियों के आर्थिक और उत्पादक मूल्य को बचाए रखने के प्रयोजन से बैंकों को कहा गया कि वे कमजोरियों को तेजी से पकड़ने और व्यवहार्यता के सावधानीपूर्वक आकलन के लिए कार्रवाई करें, और व्यवहार्य खातों के लिए समयबद्ध ढंग से पुनर्रचना पैकेज लागू करें।

सावधानी के तौर पर यह जोर दिया गया कि पुनर्संरचना का मूल प्रयोजन समस्याग्रस्त खातों को बेहतर दिखाने का प्रयास न होकर यूनिटों के आर्थिक मूल्य का बचाव करना होना चाहिए।

1.37 भारत में वित्तीय क्षेत्र को मजबूत बनाना और विकसित करना वास्तविक क्षेत्र की जरूरतों के अनुरूप रहा है। हमेशा यही प्रयास रहा है कि भारतीय अर्थव्यवस्था के सभी क्षेत्रों का सुमेलित विकास सुनिश्चित किया जाए। इस समय अंतरराष्ट्रीय स्तर पर स्वीकार किए जा चुके सिद्धांतों पर आधारित बहुत से उपायों को इस संकट से बहुत पहले ही भारत में लागू किया जा चुका था। इनमें बैंकिंग और गैर-बैंकिंग संस्थाओं के लिए लीवरेज पर प्रतिबंध, चलनिधि की सख्त अपेक्षाएं, प्रतिचक्रीय विवेकपूर्ण उपाय, टियर-1 पूंजी में मान्यता न दी गई बहुत-सी मदें अंतरराष्ट्रीय स्तर पर जिनका अनुकरण अब किया जा रहा है, जारी की गई प्रतिभूतियों की समयावधि के दौरान एसपीवी की प्रतिभूतिकृत आस्तियों की बिक्री से प्राप्त लाभ का परिज्ञान तथा अप्राप्त लाभों की गणना अर्जन में न करने या टियर-1 पूंजी में शामिल न करने जैसी व्यवस्थाओं को शामिल किया जा चुका था। चुनौती यह है कि पर्याप्त संरक्षा-उपायों और जोखिम प्रबंधन की सुदृढ़ नीतियों का पालन करते हुए किस प्रकार वित्तीय उत्पादों और नवोन्मेषों के माध्यम से वास्तविक क्षेत्र की वृद्धि को आगे बढ़ाया जाए।

वाणिज्यिक बैंकों के परिचालन और कार्यनिष्पादन

1.38 भारत के अनुसूचित वाणिज्य बैंकों ने अपने वैश्विक प्रतिपक्षियों के विपरीत वैश्विक वित्तीय संकट की शुरुआत और भारतीय अर्थव्यवस्था पर इसके दुष्प्रभावों के समक्ष पर्याप्त आघात-सहनीयता दिखाई। इसके बावजूद, अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के तुलनपत्रों पर इसका कुप्रभाव पड़ा और उनके वित्तीय कार्यनिष्पादन में गिरावट आई, जिससे यही प्रकट होता है कि भारतीय बैंकिंग प्रणाली भी भारतीय अर्थव्यवस्था में मंदी के दुष्प्रभावों से पूरी तरह से विमुक्त नहीं थी। यद्यपि 2007-08 की तुलना में 2008-09 के दौरान अनुसूचित वाणिज्य बैंकों की ऋण और जमाराशियों में गिरावट दर्ज हुई, तथापि ये काफी हद तक सकारात्मक बनी रहीं। 2008-09 के दौरान बैंकों द्वारा उद्योगों, व्यक्तियों और सेवा क्षेत्रों को दिए जाने वाले ऋणों में कमी दर्ज हुई, जबकि कृषि और इसके सहयोगी क्रियाकलापों को दिए गए बैंक-ऋण में महत्वपूर्ण बढ़ोतरी हुई। एनडीटीएल में एसएलआर निवेश का अनुपात काफी बढ़ गया जो कि सरकार द्वारा बाजार से उच्चतर उधार लेने के कार्यक्रम को दर्शाता है।

1.39 पिछली प्रवृत्ति में बदलाव को दर्शाते हुए अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के तुलनपत्र से इतर (ओबीएस) मदों से संबंधित एक्सपोजर में 2008-09 के दौरान 26 प्रतिशत की गिरावट हुई। अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों की आय के साथ-साथ खर्चों में भी गिरावट आई, फलस्वरूप निवल लाभ भी कम हुआ। अग्रिमों पर औसत प्रतिलाभ में वृद्धि के बावजूद लाभ में हुई यह गिरावट आंशिक रूप से जमाराशियों और लिए गए उधारों की बढ़ती औसत कीमतों के कारण ही नहीं बल्कि निवेशों के घटते प्रतिलाभ से भी हुई।

1.40 भारतीय बैंकिंग प्रणाली ने वैश्विक वित्तीय उथल-पुथल के दबाव को सहन कर लिया है, जैसा कि जोखिम भारित आस्ति के प्रति पूंजी अनुपात (सीआरएआर) से स्पष्ट है। सभी अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों की समग्र सीआरएआर मार्च 2008 के अंत में 13.0 प्रतिशत थी, जो बढ़कर मार्च 2009 के अंत में 13.2 प्रतिशत हो गई। इस प्रकार यह 9.0 प्रतिशत के न्यूनतम निर्धारण से काफी ऊपर बनी रही। एनपीए की स्थिति कुछ बिगड गई, जो कि सकल अग्रिमों के प्रति सकल एनपीए अनुपात में मामूली बढ़ोतरी से स्पष्ट है। तथापि, अर्थव्यवस्था में मंदी को देखते हुए यह अपेक्षित ही था। हालांकि इस अत्यधिक उथल-पुथल भरे वर्ष में भी समग्र भारतीय बैंकिंग प्रणाली का कार्यनिष्पादन पर्याप्त रूप से अच्छा रहा है।सकल अग्रिम राशियों के प्रति सकल अनर्जक आस्तियों का अनुपात मार्च 2009 के अंत में 2.3 प्रतिशत रहा जो मार्च 2008 के अंत की स्थिति के बराबर है। इसी प्रकार आस्तियों से होने वाले प्रतिलाभ मार्च 2008 के अंत की तुलना में मार्च 2009 के अंत में 1.0 प्रतिशत पर अपरिवर्तित रहा जो बैंकों द्वारा उनकी आस्तियों के अभिनियोजन की दक्षता में कमी न आने की ओर संकेत करता है। इक्विटी से होने वाले प्रतिलाभ मार्च 2008 के अंत के 12.5 प्रतिशत से बढ़कर मार्च 2009 के अंत में 13.3 प्रतिशत हो गये जो कि बैंकों द्वारा पूंजी के प्रयोग में बढ़ी हुई दक्षता को दर्शाता है।

वित्तीय समावेशन

1.41 वित्तीय समावेशन, वित्तीय रूप से वंचित वर्गों की औपचारिक वित्तीय प्रणाली तक पहुंच बनाकर आर्थिक विकास में योगदान देता है। सरकार और रिज़र्व बैंक का प्रयास रहा है कि भारत में विभिन्न चैनलों के जरिए भारत में वित्तीय समावेशन को प्रोत्साहित किया जाए। वित्तीय समावेशन की दिशा में अब तक किए गए विभिन्न उपाय तथा शत प्रतिशत वित्तीय समावेशन के लक्ष्य को पूरा में आड़े आ रही कुछ चिंताओं का विवरण संक्षेप में बॉक्स 1.6 में दिया गया है।

I.42 आगे, देश के विकास में समावेशी वृद्धि अहम भूमिका निभाती है तथा विकास की इस प्रक्रिया में बैंकिंग प्रणाली की भूमिका महत्वपूर्ण है। अनुभवों से पता चलता है कि बैंकों ने विकास की प्रक्रिया में काफी सहयोग दिया है परंतु इस दिशा में और अधिक प्रयास किए जाने की जरूरत है। शत प्रतिशत वित्तीय समावेशन तथा समावेशी वृद्धि का लक्ष्य प्राप्त करना एक कठिन कार्य है। समय की मांग है कि बैंक खाता रखने के इच्छुक प्रत्येक परिवार के पास एक बैंक खाता हो। बैंकों ने इस दिशा में जो प्रयास किए हैं वे उत्साहवर्धक रहे हैं। तथापि, खोले गए कई खाते परिचालन में नहीं हैं। अतः, वित्तीय शिक्षा के निरंतर प्रयास के जरिए जनसाधारण के बीच जागरूकता को और बढ़ाने की जरूरत है।

I.43 बैंकों को वित्तीय समावेशन को न केवल प्रतिबद्धता बल्कि एक अवसर के रूप में भी लेना चाहिए। बैंकों द्वारा प्रौद्योगिकी को व्यापक स्तर पर अपनाया जाना चाहिए तथा बीसी के समुचित उपयोग के जरिए वित्तीय प्रणाली की परिधि बढ़ाई जानी चाहिए ताकि कम बैंक सुविधायुक्त क्षेत्रों सहित बैंक रहित क्षेत्रों तक बैंकिंग सुविधाओं का लाभ मिल सके।

कारपोरेट अभिशासन

1.44 वित्तीय संस्थाओं में वित्तीय स्थिरता के लिए कारपोरेट अभिशासन की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। बाह्य पर्यवेक्षण के साथ साथ, वित्तीय संस्थाओं के भीतर अधिकाधिक पर्यवेक्षी सुविधाजनक स्थिति उपलब्ध कराने की दृष्टि से कारपोरेट अभिशासन को सुदृढ़ बनाए जाने की जरूरत है। हाल में आए वित्तीय संकट से वित्तीय स्थिरता बनाए रखने में कारपोरेट अभिशासन की भूमिका फिर से महत्वपूर्ण हो गई है और विनियामक प्राधिकारियों,विभिन्न श्रेणी की वित्तीय संस्थाओं तथा देशों के बीच कारपोरेट अभिशासन संबंधी कार्य-व्यवहार तथा सिद्धांतों में अधिक एकरूपता लाए जाने की जरूरत बढ़ गई है।

1.45 भारतीय बैंकों में कारपोरेट अभिशासन के मानकों को सुदृढ़ बनाने और इन मानकों को अंतरराष्ट्रीय सर्वोत्तम प्रथाओं के अनुरूप बनाये जाने के प्रयास किए जा रहे हैं । इस दिशा में हाल के वर्षों में रिज़र्व बैंक द्वारा की गई कार्रवाई में *अन्य बातों के साथ साथ* निम्नलिखित बातें शामिल हैं: सार्वजनिक तथा निजी क्षेत्र के बैंकों के निर्वाचित निदेशकों के लिए 'सुयोग्य और उचित' मानदंड निर्धारित करना, समीक्षा के लिए कार्यक्रम की सूची में शामिल मदों में संशोधन करना और बैंकों द्वारा बनाई जानेवाली कारोबारी योजनाओं के संबंध में नीतिगत समीक्षा करने की सिफ़ारिश करना।

1.46 भारतीय वित्तीय प्रणाली में कारपोरेट अभिशासन संस्कृति को और मजबूत बनाने की दृष्टि से ऐसे कुछ विषय हैं जिन पर ध्यान दिया जाना चाहिए। भारतीय वित्तीय प्रणाली वैविध्यपूर्ण स्वरूप की है जिसमें अनुसूचित वाणिज्य बैंक, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक, ग्रामीण और शहरी सहकारी बैंक जैसा विभिन्न बैंक श्रेणियां और गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनियां शामिल हैं तथा प्रत्येक श्रेणी की संस्था के अपने अलग अभिशासन संबंधी मुद्दे हैं। उदाहरण के लिए शहरी और ग्रामीण सहकारी समितियों का अभिशासन अधिकांशत: राज्य सरकारों के कार्यक्षेत्र में है, इन विषयों का समाधान हाल में रिज़र्व बैंक/नाबार्ड के साथ राज्य सरकारों द्वारा हस्ताक्षरित समझौता ज्ञापनों की सहायता से किया गया है। साथ ही, सार्वजनिक और निजी क्षेत्र के बैंकों जैसी संस्थाओं की विभिन्न श्रेणियों के बीच कारपोरेट अभिशासन में समरूपता लाए जाने की जरूरत है। बैंक समूहों के बीच कारपोरेट अभिशासन की प्रथाओं के मानकीकरण, विशेष रूप से बैंकों के बोर्डों पर व्यावसायिकों को नियुक्त करने के परिप्रेक्ष्य में, के मुद्दे को सीएफएसए, 2009 द्वारा बल दिया गया है।

बैंकों में जोखिम प्रबंधन प्रणाली

1.47 बैंकों में उत्पादों और सेवाओं में जटिलता एवं नवीनता से जुड़े नवोन्मेषों और साथ-साथ लाभप्रदता और प्रतिस्पर्धा की

बॉक्स I.6: शत प्रतिशत वित्तीय समावेशन के लिए भावी मार्ग: कुछ चिंताएं

समावेशी वृद्धि के महत्व को ध्यान में रखते हुए विश्व भर में वित्तीय प्रणाली को और समावेशी बनाने की दिशा में प्रयास किए जा रहे हैं। भारत में वित्तीय समावेशन समिति (अध्यक्षः डॉ. सी. रंगराजन) ने वित्तीय समावेशन हेतु एक राष्ट्रीय मिशन का गठन करने के लिए सुझाव देते हुए यह मत व्यक्त किया है कि वित्तीय समावेशन को एक मिशन के रूप में लिया जाना चाहिए। बैंकिंग प्रणाली से जुड़ने पर लोगों को लेनदेन तथा भुगतान संबंधी कई सारी सेवाएं लेने, कम लागत पर ऋण, बीमा तथा सुरक्षित बचत संबंधी उत्पाद प्राप्त करने में सुविधा होती है। यह देखा गया है कि जिन लोगों के पास बैंक खाते नहीं होते वे सामान्यतः असहाय तथा आर्थिक रूप से कमजोर होते हैं। बैंक खाते के न होने से इन लोगों को सरल-से ऋण उत्पाद का लाभ लेने से भी वंचित रहना पड़ता है, जिसके कारण उन्हें निर्दयी अथवा यहां तक कि अवैध ऋणदाता के शरण में जाना पड़ता है और इसके कारण वे हमेशा ऋण में डूबे रहते हैं।

भारत में 1969 तथा 1980 में प्रमुख वाणिज्य बैंकों के राष्ट्रीयकरण के बाद बैंकिंग क्षेत्र में व्यापक विस्तार के बावजूद पारिवारिक इकाइयों का एक उल्लेखनीय हिस्सा, विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में, औपचारिक बैंकिंग प्रणाली की परिधि से अभी भी बाहर है। ये परिवार अपनी ऋण जरूरतों के लिए अनौपचारिक ऋणदाताओं पर आश्रित रहे हैं तथा अपनी जमाराशि को रखने के लिए उनके पास बहुत कम माध्यम है। किसी बैंक शाखा में जाने पर इतना समय लगता है कि उन्हें उस दिन की मज़दूरी गंवानी पड़ती है।

वित्तीय सुविधा से वंचित लोगों को औपचारिक बैंकिंग प्रणाली के अंतर्गत लाने के लिए भारतीय रिज़र्व बैंक तथा सरकार ने कई कदम उठाए हैं। इन प्रयासों में बैंकों का राष्ट्रीयकरण, प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्र की पहचान तथा इसके लिए लक्ष्य का निर्धारण, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों, स्थानीय क्षेत्र बैंकों की स्थापना, सेवा क्षेत्र ऋण योजना के जरिए ग्रामीण क्षेत्रों में ऋण के वितरण हेतु ध्यान दिया जाना तथा बैंकों द्वारा माइक्रोफाइनान्स हेतु समर्थनकारी नीतियां बनाने जैसे कदम शामिल हैं। इसके अतिरिक्त, केवाइसी मानदंडों का सरलीकरण, नो-फ्रिल खातों, किसान क्रेडिट कार्डों, सामान्य प्रयोजन क्रेडिट कार्डों की शुरुआत, नो-फ्रिल खातों में कम राशि का ओवरड्राफ्ट देने की व्यवस्था तथा कारोबार संपर्की तथा कारोबार सहुलियतकर्ता मॉडलों के उपयोग करने हेतु बैंकों को अनुमति दिए जाने आदि ऐसे उपाय थे जो वित्तीय समावेशन को बढ़ावा देने के उद्देश्य से किए गए थे।

वर्ष 2005-06 के भारतीय रिज़र्व बैंक के वार्षिक नीतिगत वक्तव्य में यह घोषित किया गया था कि रिज़र्व बैंक ऐसी नीतियों को लागू करेगा जो निचले तबके के लोगों सहित समाज के लोगों की बैंकिंग जरूरतों को पूरा करने हेतु व्यापक सेवाएं प्रदान करने वाले बैंकों को प्रोत्साहित करने के साथ-साथ ऐसा न करने वाले बैंकों को निरुत्साहित करेंगी। बैंकों से आग्रह किया गया है कि वे वित्तीय समावेशन के लक्ष्य के अनुरूप अपनी विद्यमान प्रथाओं में सामंजस्य लाएं।

वित्तीय समावेशन के प्रयास की दिशा में ध्यान केंद्रित करने के उद्देश्य से राज्य स्तरीय बैंकर्स समिति (एसएलबीसी) को सूचित किया गया है कि वे शत प्रतिशत वित्तीय समावेशन हेतु एक अथवा एकाधिक जिलों की पहचान करें। बैंक खाता रखने के इच्छुक लोगों को यह सुविधा प्रदान करने हेतु संबंधित क्षेत्र विशेष के बैंकों के बीच गांवों को बांट दिया गया है। शत प्रतिशत वित्तीय समावेशन हेतु देश भर में प्रयास किए जा रहे हैं। अब तक एसएलबीसी ने शत प्रतिशत वित्तीय समावेशन हेतु 431 जिलों की पहचान की है। 31 मार्च 2009 की स्थिति के अनुसार, 18 राज्यों में 204 जिलों तथा 5 संघ शासित प्रदेशों ने रिपोर्ट की है कि उन्होंने लक्ष्य प्राप्त कर लिया है।

तथापि, शत प्रतिशत वित्तीय समावेशन के लक्ष्य की प्राप्ति की दिशा में कई अड़चनें हैं। इस प्रयास से जुड़ी कुछ चिंताएं निम्नानुसार हैं :

व्याप्ति : भारत का आकार तथा उसकी जनसंख्या विशाल होने के कारण राष्ट्रीय स्तर के किसी भी कार्यक्रम की सुविधा सभी तक पहुंचने में दिक्कतें आती हैं। शहरी तथा महानगरीय केंद्रों पर समावेशन संबंधी प्रयास में, विशेष रूप से उन प्रवासी मजदूरों के मामले में कठिनाइयां आती हैं जिनके पास अपने कार्य के स्थल पर परिचय संबंधी कोई साक्ष्य नहीं होता। ये प्रवासी मजदूर अपने गृह शहर में जो विप्रेषण भेजते हैं उसके लिए वे आम तौर पर अनौपचारिक चैनलों पर निर्भर करते हैं।

बुनियादी ढांचा : देश के कई भागों में बुनियादी ढांचा कमजोर रहने के कारण विकास की प्रक्रिया बाधित हुई है। यह जरूरी है कि सड़क, रेल, डिजिटल कनेक्टिविटी, ऊर्जा एवं बुनियादी सुविधाएं पर्याप्त रूप से उपलब्ध हों जो कि बैंकिंग सुविधा प्रदान करने के लिए आवश्यक है।

वित्तीय उत्पाद : यह जरूरी है कि वे उत्पाद उपलब्ध हों जो जनसाधारण की जरूरतों को पूरा करते हों। जनसाधारण के लिए अत्याधुनिक लिखतों के बजाय सरल प्रकृति के उत्पादों की जरूरत हैं जो उन्हें किफायती लागत पर उपलब्ध हो सके। उत्पादों तथा सेवाओं का जरूरत के अनुसार होना चाहिए तथा यह एक महत्वपूर्ण मानदंड है।

वितरण मॉडल : वित्तीय समावेशन के लिए सबसे बेहतर वितरण / कारोबारी मॉडलों की पहचान करने पर ध्यान दिया जाना चाहिए। पारंपरिक तरीके की बैंक शाखाएं लाभप्रदता तथा अन्य कारणों से सभी गांवों के लिए व्यवहार्य नहीं हैं। बैंकों को सैटॅलाइट शाखाओं, मोबाइल शाखाओं, कारोबारी संपर्की/ पीओएस, तथा मोबाइल टेलिफोनी सेवाओं जैसे वितरण मॉडलों का प्रयोग करना/ अपनाना चाहिए। व्यवसाय संपर्की (बीसी) मॉडल यद्यपि लाभदायक संकल्पना है, परंतु इसका अभी विकास होना है। बीसी मॉडल की समीक्षा हेतु रिज़र्व बैंक द्वारा गठित कार्यदल ने कुछ व्यक्तियों/ संस्थाओं की सिफारिश की है जिन्हें बीसी के रूप में नियुक्त किया जा सकता है। सूचना तथा संचार प्रौद्योगिकी (आइसीटी) समाधान के साथ-साथ बीसी मॉडल में ऐसी संभावनाएं हैं जिनके जरिए उन लोगों को बैंकिंग की सुविधा दी जा सकती है जो अब तक इससे वंचित रहे हैं।

प्रौद्योगिकी : प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगति होने के बावजूद मानकीकरण, इंटर ऑपरेविलिटी तथा लागत जैसे कुछ ऐसे मुद्दे हैं जो प्रौद्योगिकीय समाधान को आसानी से लागू करने मार्ग में बाधा उत्पन्न करते हैं। आइसीटी के माध्यम से दी जाने वाली वित्तीय सेवाएं समुचित रूप से मानकीकृत, सभी स्थानों पर उपयोग के योग्य तथा किफायती होनी चाहिए। देश के भीतरी भागों में बैंकिंग सुविधाएं प्रदान करने में हो रही धीमी गति का एक प्रमुख कारण कम मूल्य के लेनदेन अधिक मात्रा में होने से से जुड़ी उच्च परिचालन लागत है। प्रौद्योगिकी के जरिए लेनदेनों की लागत को काफी हद तक कम किया जा सकता है।

वित्तीय मध्यस्थों की भूमिका : वित्तीय समावेशन हेतु सभी बैंक समान रूप से तैयार नहीं हैं। जहां वाणिज्य बैंकों ने वित्तीय समावेशन की दिशा में उल्लेखनीय कदम उठाए हैं वहीं क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों तथा सहकारी बैंकों को इस दिशा में प्रयास करने की जरूरत है।

सहभागी प्रयास: इस प्रक्रिया से जुड़े सभी पक्षों को वित्तीय समावेशन के लक्ष्य की प्राप्ति हेतु साथ मिलकर कार्य करने के जरूरत है। बैंकों, राज्य सरकारों, प्रौद्योगिकी प्रदाताओं, विनियामकों तथा विकासमूलक गतिविधियों से जुड़ी एजेंसियों को संपूर्ण वित्तीय समावेशन के लक्ष्य की प्राप्ति के प्रयास हेतु मिलकर कार्य करना चाहिए।

भावना के चलते बैंकों के सम्मुख जोखिमों के आयाम बदल गये हैं। विभिन्न कारोबारी गतिविधियां करनेवाले बड़े बैंक समूहों के अस्तित्व में आने से ऐसे संगठनों के लिए जोखिमों के आयामों तथा उनके संभाव्य प्रणालीगत परिणामों का स्पष्ट आकलन कर लेना जरूरी हो गया है। प्रत्येक एक्सपोजर के संबंध में अलग-अलग प्रबंधन करना मात्र पर्याप्त नहीं है और यह महत्वपूर्ण है कि समूचे संगठन के समग्र एक्सपोजर पर वे पर्याप्त ध्यान दें अर्थात समूचे संगठन में जोखिमों की पहचान की जानी चाहिए और उसका प्रबंधन किया जाना चाहिए।

1.48 सीएफएसए जिसने वर्ष 2008 में भारत के वित्तीय क्षेत्र का मूल्यांकन किया था, ने महसूस किया कि हाल के वैश्विक वित्तीय संकट से बासल के वर्तमान के कोर (मूलभूत) सिद्धांतों की सीमाएं उजागर हुई हैं, यहां तक कि उक्त मूल्यांकन में एसआइवी/एनबीएफसी जैसे क्षेत्रों या गतिक प्रावधानन और प्रति-चक्रीय मानदंडों जैसे पहलुओं को विशेष रूप से शामिल नहीं किया है। अत:, सीएफएसए का मानना है कि बैंकिंग पर्यवेक्षण पर गठित बासल समिति को उक्त नये क्षेत्रों को शामिल करने की दृष्टि से बासल के कोर सिद्धांतों पर फिर से विचार करना चाहिए। दूसरे, सीएफएसए ने पाया कि हालांकि बीसीपी वाणिज्य बैंकों से इतर वित्तीय संस्थाओं पर पूर्णत: लागू नहीं हैं, फिर भी बीसीपी निर्धारण की व्याप्ति अन्य संस्थाओं तक बढ़ाने के प्रयास ऐसी संस्थाओं को संभाव्य रूप से संबद्ध किये जाने और वित्तीय प्रणाली की स्थिरता पर पर उनके प्रभाव के वर्तमान परिप्रेक्ष्य में सराहनीय है। रिज़र्व बैंक भी पहले से ही गैर-बैंकिंग संस्थाओं पर ऐसे मानदंड लागू करता रहा है जो कतिपय न्यूनतम आवश्यकताओं तथा उनके परिचालन के स्वरूप की शर्त पर हैं।

1.49 एक मुद्दा जिसने अब मुख्य रूप से उल्लेखनीय स्वरूप धारण किया है वह है 'जोखिम प्रबंधन' और उसका यथोचित ज्ञान। बैंकों की जोखिमों पर हमेशा ही बैंक विशेष के स्तर पर और अलग से विचार नहीं किया जा सकता है। यह भी दलील दी जाती है कि व्यष्टि विवेकपूर्ण विनियमन का कुछेक समष्टिगत-जोखिम बढ़ाने में योगदान रहा है। समग्र रूप से, बैंकिंग गतिविधियों की बढ़ती जटिलताओं तथा संबद्ध जोखिम घटकों के चलते प्रणालीगत जोखिम अधिकाधिक सुस्पष्ट होती जा रही है। बैंकों को समस्त जोखिम घटकों का यथोचित ज्ञान होना चाहिए और साथ ही, उन्हें यह सुनिश्चित करना होगा कि उनके ग्राहक भी सम्बद्ध जोखिम के बारे में जानकारी रखते हैं एवं और अपने परिचालनों के दौरान उसे मानते हैं।

1.50 वर्तमान की संकट की स्थिति की पृष्ठभूमि में जोखिम प्रबंधन से जुड़े विषयों में से एक सर्वाधिक महत्वपूर्ण बैंकों में चलनिधि जोखिम प्रबंधन है। चलनिधि के संपूर्णत: बाधित हो जाने जैसी स्थिति उत्पन्न हो सकती है और बैंकों एवं वित्तीय संस्थाओं को प्रतिकूल बाजार स्थितियों के कारण चलनिधि के अत्यधिक अभाव का सामना करना पड़ सकता है। इस परिदृश्य में, चलनिधि के अभाव के कारण बैंक की पूंजी पूर्णतः समाप्त हो जाएगी तथा इस कारण बैंक डूबने की स्थिति में आ जाएगा। दूसरा परिदृश्य ऐसा हो सकता है कि बाजार में चलनिधि की प्रचुरता के चलते मुद्रास्फीति बढ़ जाएगी। अत:, सतर्क रहने तथा बाजार की स्थितियों पर अधिक कड़ाई से निगरानी रखे जाने की आवश्यकता है।

1.51 हाल के समय में, क्रेडिट की वृद्धि का निधीयन करने के लिए भारी मात्रा की जमाराशियों पर बैंकों की निर्भरता में हुई बढ़ोतरी महत्वपूर्ण बन गई है, क्योंकि इसमें चलनिधि एवं लाभ के निहितार्थ हैं। आवास ऋणों, भू-संपदा तथा बुनियादी संरचना के एक्सपोजरों में अधिक वृद्धि हो जाने से बैंक आस्तियों के परिपक्वता संविभाग की परिपक्वता अवधि लंबी खिंचती गई है। खरीदी गई चलनिधि पर निर्भरता बढ़ती जा रही है और आस्तियों में वृद्धि के निधीयन हेतु बड़ी मात्रा वाली जमाराशियों जैसी अस्थिर देयताओं पर भारी निर्भरता के कारण बैंकों के तुलनपत्रों में अतरल बैंकों के तुलनपत्रों में अतरल घटक में भी वृद्धि हो गयी है। इसके साथ ही, अवशिष्ट परिपक्वताओं की अवधि में कमी आ गई है जिसके कारण आस्ति-देयता असंतुलन उच्चतर हो गए हैं। इस परिप्रेक्ष्य में चलनिधि प्रबंधन को सुदृढ़ बनाए जाने तथा साथ ही, मूल जमा आधार को बढ़ाए जाने की जरूरत है और अप्रत्याशित आकस्मिकताओं से निपटने के लिए पर्याप्त मात्रा में तरल आस्तियों का कुशन तैयार रखा जाना चाहिए। इस बात को ध्यान में रखने की आवश्यकता है कि जहां किसी एक व्यक्तिगत ग्राहक के स्तर पर फुटकर जमाराशियां अस्थिर हो सकती हैं, परंतु बैंक और समग्र रूप से बैंकिंग तंत्र के लिए उससे बैंकों को बुनियादी

संरचनाओं एवं उसी प्रकार की कारोबारी गतिविधियों जैसी दीर्घावधिक आस्तियों को निधि प्रदान करने के लिए ठोस आधार उपलब्ध हो जाता है। कारोबारी मॉडल में और जोखिम प्रबंधन प्रक्रिया में इस पहलू को कैसे ढाला जाए यह एक चुनौती है।

1.52 'अपने ग्राहक को जानिए' (केवाइसी) और बैंकों की जोखिम-प्रबंधन प्रथाओं से संबंधित मुद्दा भी इसी से जुड़ा हुआ है। अच्छी 'केवाइसी' नीतियों और प्रक्रियाओं से न केवल बैंक की समग्र सुरक्षा तथा सुदृढ़ता को मदद मिलती है, अपितु, इनसे बैंकों के मनी लांडरिंग, आतंकियों के वित्तपोषण और अन्य गैर-कानूनी गतिविधियों के साधन बन जाने की संभावना को कम करते हुए बैंकिंग प्रणाली की विश्वसनीयता की रक्षा भी होती है। इसके तीन घटक हैं। 'ग्राहक को जानना' ही बैंकों के लिए पर्याप्त नहीं है, उन्हें अपने ग्राहकों के 'कारोबार' की जानकारी भी होनी चाहिए; और यदि बैंक अपने ग्राहकों के कारोबार के बारे में जानते हैं तो वे अपने हर ग्राहक के कारोबार से जुड़ी जोखिमों को भी समझ सकेंगे तथा उनका निर्धारण भी कर सकेंगे। यह प्राथमिक जोखिम प्रबंधन प्रक्रिया का महत्वपूर्ण भाग होने के साथ-साथ एक अच्छा कारोबारी ज्ञान भी है। इस क्षेत्र में विनियामक का हस्तक्षेप भविष्य में और बढ़ने की संभावना है। प्रमुख बैंकों की मोबाइल शाखाओं सहित शाखाओं के व्यापक नेटवर्क, ग्राहक आधार की व्यापकता तथा ग्राहकों की पहचान संबंधी साक्ष्यों की जटिलता को देखते हुए भारत में केवाइसी मानदंडों को लागू करने की दिशा में अपनी तरह की समस्याएं हैं। वित्तीय समावेशन तथा वित्तीय सुविधाओं के विस्तार पर अधिक बल दिए जाने के संदर्भ में केवाइसी तथा वित्तीय समावेशन के लक्ष्यों में सामंजस्य स्थापित करने की ओर ध्यान देने की जरूरत है।

ग्राहक सेवा

1.53 भारत में बैंकों के सम्मुख ग्राहकों के एक व्यापक वर्ग को सेवाएं प्रदान करने की चुनौती है, जहां एक ओर अत्याधुनिक कारपोरेट और उच्च निवल मालियत वाले व्यक्ति हैं तो दूसरी ओर निम्न वर्ग के उधारकर्ता हैं जिनकी जरूरतें सूक्ष्म (अल्प) वित्त प्रदान कर पूरी की जाती हैं। समयांतर में, ग्राहक सेवा की गुणवत्ता में सुधार लाने के लिए कई पहलें की गई हैं जिनमें अन्य बातों के साथ निम्नलिखित शामिल हैं : बैंकिंग लोकपाल योजना के जरिए शिकायतों का निवारण, बैंक के भीतर विभिन्न बढ़ते स्तरों पर ग्राहक सेवा समितियों का गठन, रिज़र्व बैंक में एक ग्राहक सेवा विभाग का गठन। इन सबके बावजूद दिशा-निर्देशों को कार्यान्वित करने में अंतराल बने हुए हैं जिससे ग्राहक की शिकायतें बढ़ रहीं हैं। भविष्य में, बैंकों द्वारा वित्तीय शिक्षण, ऋण परामर्श सेवा और सूचना के प्रचार-प्रसार में सुधार जैसे उपायों के जरिए ग्राहक सेवा में सुधार किये जाने की जरुरत है। रिज़र्व बैंक द्वारा हाल में वित्तीय साक्षरता-व-परामर्श सेवा केंद्र गठित करने संबंधी की गई पहल इस दिशा में उठाया गया एक कदम है।

1.54 ग्राहकों की जरूरत के अनुरूप सेवाओं की बढ़ती मांग के परिप्रेक्ष्य में ग्राहकों का डाटाबेस विकसित करना अत्यावश्यक है। तथापि, ऐसे डाटा की गोपनीयता सुनिश्चित की जानी चाहिए। सीएफएसए ग्राहकों की मांग के अनुरूप विशिष्ट प्रकार के उत्पाद तथा सेवाएं प्रदान करने हेतु ग्राहकों के डाटाबेस तथा संबंध आधारित मूल्यन का लाभ उठाने के लिए टेक्नोलॉजी के व्यापक और लक्ष्यकेंद्रित प्रयोग पर बल देता है। सीएफएसए ने यह भी सिफारिश की है कि ग्राहक सेवा के संबंध में आवश्यक न्यूनतम रेटिंग प्राप्त न करने वाले बैंकों को शाखा लाइसेंसीकरण के रूप में मिलनेवाले लाभों से वंचित किया जा सकता है।

1.55 ग्राहकों को निष्पक्ष सेवा प्रदान करने के लिए विनियामक तथा बाजार-आधारित समाधानों के मिले -जुले स्वरूप को अपनाना होगा। इन दोनों के बीच किस प्रकार संतुलन रखा जाए यह महत्वपूर्ण मुद्दा है। उत्पाद की संपूर्ण अवधि के दौरान ग्राहक के साथ निष्पक्ष व्यवहार करने संबंधी उपायों में निम्नलिखित शामिल हैं :

- उत्पाद की डिज़ाइन और अभिशासन;
- लक्ष्य बाजारों की पहचान;
- उत्पाद की मार्केटिंग और उसे बढ़ावा देना;
- बिक्री तथा सूचना संबंधी प्रक्रियाएं;
- बिक्री के बाद की जानकारी व्यवस्था; और
- शिकायतों का समाधान।

व्युत्पन्न (डेरिवेटिव) लिखतें और प्रतिभूतिकरण

1.56 वित्तीय डेरिवेटिवों का भारतीय बाजारों में विनिमय दर और ब्याज दर जोखिमों की हेजिंग करने के लिए व्यापक पैमाने पर किया जाता है। डेरिवेटिव लेनदेनों में अन्य देशों की तुलना में भारत में मात्रात्मक वृद्धि तेज रही है। सीएफएसए ने नोट किया है कि भारत के वाणिज्य बैंकों के तुलनपत्र से इतर एक्सपोजरों में हाल के वर्षों में हुई वृद्धि मुख्य रूप से डेरिवेटिवों के कारण थी। समिति ने उल्लेख किया है कि चालू लेखांकन मानकों में डेरिवेटिव लेनदेनों से होनेवाली हानि और लाभ को किस प्रकार लेखाबद्ध किया जाए यह स्पष्ट रूप से निर्दिष्ट नहीं किया गया है। सीएफएसए ने नोट किया कि हाल में हुई सबप्राइम उथल-पुथल से यह महसूस किया गया कि जटिल डेरिवेटिव उत्पादों से उत्पन्न होनेवाली जोखिमों को कम करने के लिए एक केंद्रीकृत नेटिंग प्रणाली का होना जरूरी है।

1.57 डेरिवेटिवों के संबंध में, रिज़र्व बैंक को निर्दिष्ट किया गया था कि बैंकों के पास उपयुक्तता और अनुरूपता संबंधी नीति होनी चाहिए। बाजार निर्माता को चाहिए कि वे उपयोगकर्ताओं को उत्पाद का प्रस्ताव करने से पूर्व उत्पाद के 'उपयोगकर्ता के लिए सही' और 'योग्य' होने के संबंध में समुचित सावधानी बरतें। प्रत्येक बाजार निर्माता को डेरिवेटिव कारोबारों के लिए बोर्ड द्वारा अनुमोदित 'ग्राहक अनुरूपता और उपयुक्तता नीति' अपनानी चाहिए। इस संबंध में, सीएफएसए ने नोट किया कि रिज़र्व बैंक के दिशा-निर्देशों का बैंकों द्वारा कड़ाई से पालन करना चिंता का विषय बना हुआ है।

1.58 इस बात पर कोई असहमति नहीं है कि प्रतिभूतिकरण से बैंकों को उनकी पूंजी आवश्यकताएं कम करने में सहायता मिलती हैं परंतु प्रतिभूतिकरण की सफलता उच्च गुणवत्तावाली आस्तियों के समूहन तथा सभी संबद्ध पार्टियों द्वारा इसमें निहित संरचना और मानकों के समुचित ज्ञान पर निर्भर करती है। यह उल्लेखनीय है कि प्रतिभूतिकरण के अनुचित कार्यान्वयन तथा साथ ही, गलत चयन एवं नैतिक जोखिम के कारण अमरीका में वित्तीय उथल-पुथल हुई। इस प्रकार, वित्तीय उथल-पुथल ने प्रणाली की समग्र स्थिरता के हित में डेरिवेटिवों के लिए विवेकपूर्ण मानदंडों एवं प्रकटीकरण आवश्यकताओं की जरूरत को पुनःरेखांकित किया है।

1.59 हाल में, कुछ अग्रणी अंतरराष्ट्रीय निवेश बैंकों ने एक पारदर्शी तथा कम जटिल रूप में जोखिम, पूंजी तथा निधीयन दक्षता हासिल करने के लिए आस्तियों के संविभागों की पुनर्संरचना हेतु आस्तियों के प्रतिभूतिकरण की व्यवस्था हेतु योजना बनाए जाने की सूचना दी है। इन बैंकों का दावा है कि ये नयी प्रतिभूतिकरण योजनाएं दो कारणों से पुरानी प्रतिभूतिकरण योजनाओं से भिन्न हैंः पहले, नई प्रतिभूतिकरण योजना में बैंकों के नए दिए गए उधारों की अपेक्षा वर्तमान आस्तियां शामिल हैं और दूसरे, बैंकों का कहना है कि नया उत्पाद जोखिम अंतरण को छिपाता नहीं है। साथ ही, इन उत्पादों की क्रेडिट रेटिंग एजेंसी द्वारा रेटिंग भी की जाएगी।

1.60 प्रतिभूतिकरण को पुनः लागू किये जाने पर इस संबंध में अंतरराष्ट्रीय अनुभव को देखते हुए सावधानीपूर्वक इसकी निगरानी करनी होगी। नई प्रतिभूतिकरण योजना के संबंध में बरती जाने वाली सावधानियां इस प्रकार हैं : (i) हालांकि बैंकों का दावा है कि ये नई योजनाएं लीवरेज के लिए नहीं हैं, फिर भी प्रतिभूतिकरण प्रक्रिया से न्यून पूंजी आवश्यकता के रूप में लाभ अधिक हो तो वे लीवरेज का लाभ उठाने के लिए प्रेरित होंगे; (ii) बैंक अपनी ऐसी वर्तमान आस्ति संविभाग का प्रतिभूतिकरण करते समय अपने लाभ के लिए अपने उधारकर्ताओं से संबंधित आंतरिक जानकारी का प्रयोग कर सकते हैं जिससे प्रतिकूल चयन की समस्या पैदा हो सकती है; और (iii) चूंकि प्रतिभूतिकृत आस्तियों को बैंक के तुलनपत्र से हटा दिया जाता है, अतः, मूल रूप से क्रेडिट देनेवाले बैंक के लिए इन ऋण आस्तियों पर निगरानी रखने में रुचि समाप्त हो जाती है। इससे नैतिक जोखिम का विषय उभारकर सामने आता है। इस प्रकार, विनियामकों को समूहबद्ध की गई आस्तियों से निर्मित डेरिवेटिव से तब सतर्क रहना चाहिए जब उनका उपयोग विनियामक पूंजी आवश्यकताओं से बचने के रूप में किए जाने का संदेह हो। यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि ऐसी योजनाएं एक व्यापक पूंजी अंतरपणन का रूप धारण न करें।

1.61 प्रतिभूतिकरण के संबंध में अप्रैल 2009 के लंदन शिखर सम्मेलन के बाद हाल ही में किए गए उपायों में बासल पूंजी ढांचे में स्थित उन कमियों को दूर करना शामिल था जो पूर्व में बैंकों के लिए तुलनपत्र से इतर मदों के प्रतिभूतिकरण को प्रोत्साहित करते थे। लेखांकन प्रथाओं की उन कतिपय कमियों का भी समाधान कर लिया गया जो तुलनपत्रों से इतर मदों से संबंधित एक्सपोजर को प्रोत्साहित

करती थीं। अब तक किए गए उपायों के अलावा, बासल समिति आगे और सुधारों के बारे में विचार कर रही है जिनको विभिन्न देशों के पर्यवेक्षकों तथा विनियामकों के द्वारा लागू किया जाएगा। इनमें पूंजी, चलनिधि तथा प्रावधान को शामिल करते हुए वित्तीय प्रणाली में सुदृढ़ पूंजी बफर के गठन के प्रयास शामिल हैं। इसके अलावा, बासल समिति द्वारा प्रतिभूतिकरण के संबंध में पूंजीगत अपेक्षाओं को सुदृढ़ करने के संबंध में किए गए उपायों को निकट भविष्य में लागू किया जाएगा जिसमें प्रतिभूतिकरण तथा पुनःप्रतिभूतिकरण पर उच्चतर जोखिम भार तथा प्रतिभूतिकृत एक्सपोजरों का बेहतर प्रकटन शामिल है।

ब्याज दर परिवेश

1.62 मौद्रिक संप्रेषण तंत्र का तात्पर्य उस सीमा और गति से है जिस सीमा और गति से केंद्रीय बैंक की नीतिगत दरों में होनेवाले बदलाव का असर ब्याज दर की मीयादी संरचना के जरिए बाजारों में संप्रेषित होता है। इसका प्रभाव सर्वप्रथम अल्पावधि दरों, अर्थात् मांग मुद्रा दर और अल्पावधि खजाना बिलों की दरों में अंतरित होता है। इसके बाद उक्त प्रभाव दीर्घावधि की दरों अर्थात् दीर्घावधि सरकारी प्रतिभूति में प्रतिफल में अंतरित होता है। यही प्रतिफल ऋण बाजार में उधार दरों को प्रभावित करता है और परिणामतः बचतों और निवेशों में परिवर्तन के जरिए आर्थिक वृद्धि को प्रभावित करता है। भारत के परिप्रेक्ष्य में, नीतिगत दरों ने मुद्रा और सरकारी प्रतिभूति बाजारों को जिसे प्रकार प्रभावित किया है उसमें उल्लेखनीय दक्षता विद्यमान रही है।

1.63 सितंबर 2008 से वैश्विक वित्तीय संकट के और गहराने के बाद रिज़र्व बैंक ने प्रणाली में चलनिधि की मात्रा बढ़ाने के लिए नीतिगत दरें कम करने के लिए कई उपाय किये। इस प्रकार, मांग मुद्रा दरें नवंबर 2008 के प्रारंभ से अनौपचारिक एलएएफ कॉरिडोर के अंदर अथवा उसके निचले स्तर से नीचे बनी रहने के कारण चलनिधि की स्थिति सुधरकर अच्छी हो गई है। तथापि, सरकार ने वर्ष 2008-09 के दौरान अर्थव्यवस्था को पुनरुज्जीवित करने के लिए बड़े वित्तीय प्रोत्साहनों का सहारा लिया जिनके वर्ष 2009-10 में बने रहने की आशा है। रिज़र्व बैंक प्रणाली में सक्रिय रूप से चलनिधि का प्रबंधन कर रहा है, इसके बावजूद सरकारी उधारों में बड़े पैमाने पर बढ़ोतरी होने के फलस्वरूप जनवरी 2009 से प्रतिफल में वृद्धि हुई है। मध्यावधि में रिज़र्व बैंक के सामने बड़ी चुनौती अबाधित रूप में सरकारी उधारों का प्रबंधन करना रही है। यह इसलिए है कि प्रतिफल में वृद्धि होना उस कम ब्याज दर दौर की भावना के विरुद्ध होगा जिसकी कि वर्तमान परिस्थिति में आर्थिक वृद्धि के पुनरुज्जीवन के लिए अर्थव्यवस्था को जरूरत है।

1.64 रिज़र्व बैंक की नीतिगत दरों में की गई कटौती से संकेत पाकर सरकारी क्षेत्र के सभी बैंकों, निजी क्षेत्र के बैंकों और विदेशी बैंकों ने अपनी जमाराशि और उधार की दरों में कटौती की। तथापि, उधार दरों में की गई कटौती कुछ अंतराल के बाद हुई। सभी परिपक्वताओं की जमाराशियों पर सरकारी क्षेत्र के बैंकों द्वारा दी जानेवाली ब्याज दरों में अक्तूबर 2008 के बाद मामूली कमी परिलक्षित हुई। इसके अलावा, दिसम्बर 2008 के बाद निजी क्षेत्र के बैंकों और विदेशी बैंकों की सभी परिपक्वताओं की जमा दरों में भी गिरावट देखी जा सकती है। सरकारी क्षेत्र और निजी क्षेत्र के बैंकों की बेंचमार्क मूल उधार दर में भी अक्तूबर 2008 से गिरावट आई है। हालांकि, विदेशी बैंकों के बीपीएलआर में कोई कमी नहीं हुई। इसके अलावा, सरकारी क्षेत्र के बैंकों के गैर निर्यात ऋण की वास्तविक ब्याज दर और 2 लाख रुपए तक की मीयादी उधार दर में कमी आई लेकिन निजी क्षेत्र के बैंकों और विदेशी बैंकों के मामले में, नीतिगत दरों और मुद्रास्फीति में कमी के बावजूद सितम्बर 2008 और दिसम्बर 2008 के बीच इसमें कुछ बढ़ोतरी हुई और दिसम्बर 2008 और जून 2009 के बीच इसमें कमी आई।

1.65 मोटे अनुमानों से संकेत मिलता है कि अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के लिए प्रभावी औसत उधार की ब्याज दर मार्च 2008 के 12.3 प्रतिशत की तुलना में गिरकर मार्च 2009 में 11.1 प्रतिशत हो गई। प्रभावी उधार दर में 2009-10 की पहली तिमाही में गिरावट की संभावना है।

अनर्जक आस्ति प्रबंधन

1.66 अनर्जक आस्ति के स्तर में बढ़ोतरी से कई नकारात्मक परिणाम सामने आते हैं। बैंकिंग प्रणाली की दृष्टि से, उच्च ऋण हानि प्रावधानों से निवल लाभ में कमी होती है, और उधार संबंधी दरों पर दबाव पड़ता है। उच्च वास्तविक उधार दरें नए और ऋण के लिए पात्र उधारकर्ताओं को बैंकों से ऋण लेने से हतोत्साहित करती हैं जो वास्तविक आर्थिक गतिविधियों के लिए नकारात्मक परिणाम लाती

है। समष्टि आर्थिक नीति की दृष्टि से बड़ी मात्रा में अनर्जक आस्ति के कारण उधार संबंधी ब्याज दरों में आई सख्ती मौद्रिक नीति की प्रभावशीलता को कम कर देती है। इसके अलावा, ऋण हानियों के कारण सरकार द्वारा जिस सीमा तक सरकारी क्षेत्र के बैंकों का पुनःपूंजीकरण करना पड़ता है, उस सीमा तक अनर्जक आस्ति अर्ध-राजकोषीय देयताओं जैसी होती है।

1.67 अनर्जक आस्ति अनुपात में वर्षों के दौरान लगातार गिरावट आ रही है। पिछले पांच वर्षों में उच्च जीडीपी वृद्धि के साथ-साथ उच्च ऋण वृद्धि के संदर्भ में ऋण में वृद्धि और अनर्जक आस्ति की प्रवृत्ति के बीच कुछ अंतराल होना सर्वविदित है। इसलिए कई विश्लेषक यह मानते हैं कि अनर्जक आस्तियों के अनुपात में वृद्धि देखने में आएगी, विशेषकर ऋणों की पुनर्संरचना के संदर्भ में।

1.68 जहां मंदी में अनर्जक आस्तियों में वृद्धि की उम्मीद करना अस्वाभाविक नहीं है, वहीं बैंक अनर्जक आस्तियों के उच्चतर स्तर के प्रभाव को कम करने के लिए अच्छी तरह से पूंजीकृत हैं। पिछले दस वर्षों में बैंकों की निवल मालियत में हुई वृद्धि और उनकी अनर्जक आस्ति में हुई लगातार कमी को देखते हुए अनर्जक आस्ति के लिए पूंजीगत रक्षा विवेकपूर्ण स्तर पर है।

सूचना प्रौद्योगिकी (आइटी)

1.69 एक कुशल, प्रभावी, संवेदनशील और उपयोगकर्ता के अनुकूल वित्तीय प्रणाली बनाने की भारतीय बैंकिंग की यात्रा में सूचना प्रौद्योगिकी का प्रयोग महत्वपूर्ण अंग है। ग्राहक संबंधों को बढ़ाने में सूचना प्रौद्योगिकी और समर्थनकारी नवोन्मेष एक अहम साधन है। वे वित्तीय लेनदेन की लागत में कमी, वित्तीय संसाधनों के आबंटन में सुधार और वित्तीय संस्थानों की प्रतिस्पर्धात्मक क्षमताओं एवं कुशलताओं में बढ़ोतरी करते हैं।

1.70 भारत में बैंकिंग क्षेत्र में सूचना प्रौद्योगिकी की उपलब्धियां प्रभावी रहने के बावजूद इसके लिए भविष्य में कार्य की व्यापक कार्ययोजनाएं हैं। मौजूदा वित्तीय क्षेत्र के अग्रणियों को नई प्रौद्योगिकीय और सूचना आधारित प्रणालियों से अधिक से अधिक फायदा लेने और भारतीय बैंकिंग और वित्तीय प्रणाली के दायरे को अभी भी बढ़ाने की जरूरत है। उदाहरण के लिए, ग्रामीण और अर्द्ध शहरी क्षेत्रों के ऐसे बाज़ारों में जहां बैंकिंग सेवाएं अल्प मात्रा में मिल पा रही हैं, बैंकिंग सेवाओं के विस्तार में सूचना प्रौद्योगिकी की क्षमता बहुत ज्यादा है। दूर-दराज क्षेत्रों में स्मार्ट कार्ड तकनीक, मोबाइल एटीएम, इलेक्ट्रानिक भुगतान नेटवर्क के अंतर्गत डाकघरों को शामिल करना ज्यादा से ज्यादा लोगों के पास वित्तीय सेवाओं को उपलब्ध कराने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं और इस तरह वित्तीय समावेशन भी हो सकता है।

1.71 भारत में मोबाइल संचार टेक्नोलॉजी का प्रसार अति तीव्रता से हो रहा है और यह एक ऐसी प्रगति है जिसे वित्तीय क्षेत्र अपने काम में लगा सकता है। मोबाइल फोन के प्रयोक्ता समाज के सभी वर्गों, महानगरीय केंद्रों, कस्बों और गांवों में फैले हैं। दूरसंचार क्षेत्र की इस पहुंच का लाभ बैंक इस माध्यम से सेवाएं प्रदान कर ले सकते हैं। हालांकि, ऐसी क्षमताओं का विस्तार आवश्यक स्तर की न्यूनतम सुरक्षा और ग्राहक लेनदेन की गोपनीयता से संबंधित स्थापित नियमों के अनवरत अनुपालन के साथ किया जाना चाहिए।

1.72 बहु वितरण चैनलों के माध्यम से जनसाधारण को सस्ती और कम लागत में बैंकिंग सेवाओं को उपलब्ध कराने के लिए भारतीय बैंकिंग में प्रौद्योगिकी का इस्तेमाल समय की मांग है। प्रदत्त की जा रही सेवाओं की रेंज बैंक के आकार और प्रकार के अनुसार बैंक-दर-बैंक अलग-अलग होती है। इंटरनेट बैंकिंग से बैंकिंग उद्योग का चेहरा बदल रहा है और बैंकिंग संबंधों पर इसका गहरा प्रभाव पड़ रहा है। निकट भविष्य के सूचना प्रौद्योगिकी की क्षमता में निम्नलिखित भी शामिल होगाः

- ग्राहक सेवा में विभेदीकरण करना;
- डाटा वेयर हाउस में संग्रहीत और प्राप्त की जा सकने वाली उपलब्ध सूचनाओं के आधार पर ग्राहक संबंध के प्रबंधन (सीआरएम) को सुविधाजनक बनाना;
- बैंकों के आस्ति-देयता प्रबंधन में सुधार लाना, जो बैंकों के लाभ पर सीधे प्रभाव डालता है;
- धन-शोधन निवारक विनियमों के अनुपालन को बढ़ाना; और
- बासल II मानदंडों का अनुपालन।

1.73 प्रौद्योगिकी की संगणन की चमत्कारी क्षमता ने स्पीड, लागत में कमी लाने तथा परिशुद्धता की दृष्टि से कारोबारी प्रक्रिया को निःसंदेह अत्यंत कुशल बना दिया है। तथापि, इस विकासक्रम से जुड़ी परिचालनगत जोखिमों पर पर्याप्त ध्यान देने की आवश्यकता है। अतः सूचना सुरक्षा (आइएस) एक अहम प्राथमिकता बन गई है। सूचना की सुरक्षा के प्रबंधन हेतु बेहतर सॉल्यूशनों, सुदृढ़ कारोबार निरंतरता योजना(बीसीपी) तथा आपदा के बाद बहाली की व्यवस्था(डीआर) संबंधी ढांचे एवं सूचना प्रणाली लेखा-परीक्षा संबंधी टूल की तलाश जारी रहनी चाहिए।

बैंकिंग में सरकारी क्षेत्र की भूमिका

1.74 बैंकों के स्वामित्व के दो मॉडल हैं, पहला एंग्लो-सेक्सन मॉडल और दूसरा एशियाई मॉडल[2] - पहला मॉडल अधिकांश विकसित देशों में अपनाया जा रहा है, जबकि दूसरा मॉडल भारत जैसे कुछ विकासशील देशों में देखा जा सकता है। पहले मॉडल के अंतर्गत, प्रमुख निर्णय शीर्ष कार्यपालकों द्वारा अल्पावधि प्रतिफलों के अनुसार अधिकांशतः स्वतंत्र रूप से लिया जाता है और विनियामक आवश्यकतानुसार कठोर नहीं हैं। इसके विपरीत, भारत जैसे देशों में वित्तीय प्रणाली पर्याप्त रूप से सरकारी क्षेत्र की स्वामित्व वाली है और शीर्ष कार्यपालकों के लिए भिन्न प्रोत्साहन संरचना है। इस मॉडल में जटिल व्युत्पन्नियों के रूप में वित्तीय नवोन्मेष कम होने की संभावना है और इसमें जोखिम उठाने हेतु प्रोत्साहन कम रहता है। इस प्रकार, यह क्षेत्र कम नवोन्मेषी और कम कुशल हो सकता है परंतु यह अधिक सुस्थिर भी रहेगा। जैसा कि हाल के संकट के दौरान देखा गया, संकट के समय में इस क्षेत्र को सरकारी समर्थन का सहारा रहता है और यही बात इसके पक्ष में जाती है। जहां पहला मॉडल हाल के संकट के दौरान दबाव में आया, वहीं बड़ी मात्रा में सरकारी क्षेत्र के स्वामित्व वाले दूसरे मॉडल ने ही भारतीय वित्तीय प्रणाली को अच्छी तरह बचाए रखा। यह इस तथ्य से उजागर होता है कि संकट के प्रभाव के तौर पर वर्ष 2008-09 के दौरान विदेशी और निजी क्षेत्र के बैंकों की अनर्जक आस्ति के अनुपात में काफी वृद्धि हुई और इस अवधि के दौरान राष्ट्रीयकृत बैंकों की अनर्जक आस्तियों के अनुपात में कमी आई और यह बैंक के सभी समूहों में सबसे कम था (अध्याय IV की सारणी IV.30 देखें)।

1.75 सरकारी स्वामित्व का होना भारतीय बैंकिंग प्रणाली के लिए कमजोरी के बजाय मजबूती का पर्याय सिद्ध हुआ। बैंकिंग प्रणाली सरकारी स्वामित्व की भूमिका के बारे में दृष्टिकोण पर चर्चा करते वक्त कुछ मुद्दों पर ध्यान देना आवश्यक है। पहला, इस धारणा के विपरीत कि सरकारी स्वामित्व आबंटन दक्षता को कमजोर कर देते हैं, रिज़र्व बैंक द्वारा किए गए विश्लेषणात्मक अध्ययन दर्शाते हैं कि हाल के वर्षों में भारत में सरकारी क्षेत्र के बैंकों की आबंटन,तकनीकी और लागत दक्षता निजी और विदेशी बैंकों की तुलना में बहुत अच्छी है। दूसरा, भारत में वित्तीय प्रणाली के सरकारी स्वामित्व का महत्वपूर्ण पहलू विकासात्मक वित्त के सामाजिक और पुनर्वितरण उद्देश्यों को पूरा करने में बैंकों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है जो भारत जैसे एक उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्था के लिए अति महत्वपूर्ण है।

मध्यावधि में भारत में संरचनागत वृद्धि के कारक

1.76 जब वैश्विक वित्तीय संस्थान वृद्धि एवं आस्ति-गुणवत्ता मुद्दों का सामना कर रहे हैं, तब भारतीय बैंक न्यूनतम तुलनपत्र जोखिम के साथ वृद्धि की अच्छी गति के साथ आगे बढ़ रहे हैं। पिछले पांच वर्षों में, बैंकिंग क्षेत्र की जमा राशियों में अनेक कारणों से अच्छी वृद्धि हुई हैः सांकेतिक जीडीपी वृद्धि में तेजी; बचत दर में बढ़ोतरी; कुल वित्तीय बचत में बैंक जमाराशियों का बढ़ता अनुपात; और गैर- खुदरा जमाराशियों का प्रवाह। इन कारकों के अपने चरम पर होने के कारण, भविष्य में खुदरा जमाराशियों की वृद्धि अर्द्ध-शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों में बैंकों के विस्तार पर निर्भर करेगी। भारत में बैंकों की ग्राहकों तक पहुंच वर्तमान में कम है जो उनके लिए मध्यावधि में ढांचागत वृद्धि हेतु प्रेरक कारक बन सकता है। इस संबंध में एक समर्थनकारी कारक अनुकूल जनसांख्यिकी है, जो इस बात से स्पष्ट होता है कि 30 प्रतिशत भारतीयों की आयु 15 वर्ष से नीचे है और अगले 5 से 10 वर्षों में वे ''बैंकिंग कारोबार योग्य जनसंख्या'' की श्रेणी में तबदील हो जाएंगे।

[2] गुडहर्ट, सीएई(2009), ''बैंकर्स एंड द पब्लिक सेक्टर अथारिटी'', बीआइएस वर्किंग पेपर, अगस्त।

युवा पीढ़ी के उपभोक्ता ऋण, बीमा, म्यूच्युअल फंड, धन प्रबंधन जैसे वित्तीय उत्पादों के प्रति ज्यादा जागरूक है और इसलिए वित्तीय-सेवा प्रदाताओं के लिए आय का बृहद आधार प्रदान करता है।

4. निष्कर्ष और भावी मार्ग

1.77 जबकि दुनिया भर में नीतिगत कार्रवाई तत्काल स्थिरता संबंधी चिंताओं से निपटने पर केंद्रित है,मौजूदा मंदी के प्रभाव को कम करने और वैश्विक अर्थव्यवस्था को सतत विकास के रास्ते पर लाने के लिए व्यापक रणनीति की भी आवश्यकता है। इसमें दीर्घावधि में वृद्धि को बढ़ाने के लिए उत्पादकता को बढ़ाने वाले सुधार अवश्य शामिल होने चाहिए। इस संकट में कड़े फैसले लेने का वक्त आ गया है, लेकिन इससे अन्य महत्वपूर्ण संरचनागत गंभीर चुनौतियों से ध्यान नहीं हटना चाहिए। प्रभावी और स्थायी वैश्विक प्रतिक्रिया में सभी प्रमुख भागीदारों की भागीदारी के साथ-साथ प्रमुख अंतरराष्ट्रीय संगठनों के बीच बेहतर समन्वय और अधिकतम सामंजस्य आवश्यक है।

1.78 पुनरावलोकन करें तो भारत में 1990 के दशक की शुरुआत में आरंभ किए गए वित्तीय क्षेत्र के सुधारों की सफलता इस अवधि के दौरान वित्तीय स्थिरता बनाए रखना है जब पूरे विश्व में वित्तीय संकट बार-बार दिखाई दे रहा था। सुधार की प्रक्रिया न केवल आई कठिनाइयों के लिए बल्कि भारतीय बैंकिंग प्रणाली की शुरुआत के अब तक के परिवर्तनों के विभिन्न आयामों में परिवर्तनों के लिए भी ध्यान देने योग्य है। आगे समय की मांग यह है कि वित्तीय क्षेत्र के सुधार नपेतुले ढंग से हों और संकट से भी सबक लिया जाए। नीतिगत चुनौतियां मूल्य स्थिरता के साथ उच्च वृद्धि को प्राप्त करते हुए अंतरराष्ट्रीय वित्तीय उथल-पुथल की इस अवधि के दौरान भारत में वित्तीय स्थिरता को सुनिश्चित करना है।

1.79 वित्तीय क्षेत्र के विनियमन और पर्यवेक्षण को मजबूत करने के लिए विकसित किया जा रहा एजेंडा महत्वाकांक्षी है। रिज़र्व बैंक ने कई कदम उठाए हैं और आगे भी कदम उठाने का इरादा है। विनियमन पहलुओं पर राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय दोनों स्तरों पर विवादास्पद मुद्दे उठने की संभावना है। जहां इस विनियामक ओवरहाल के सिद्धांत को अधिकाधिक स्वीकार किया जा रहा है, वहीं उनकी व्यावहारिकता और कार्यान्वयन के तरीकों के संबंध में कई चुनौतियां आएंगीः

- सबसे पहला, यह सुनिश्चित करने की आवश्यकता है कि विनियामक और पर्यवेक्षक यह सुनिश्चित करने लिए अपने संकल्प पर दृढ़ रहें कि प्रणाली में जोखिम में वृद्धि नहीं हुई है और सिद्धांतों और रूपरेखा का सटीकता से एवं उसकी भावना के साथ पालन किया जा रहा है।
- दूसरा, बाज़ार और संस्थाओं में परस्पर संबंधों के कारण केंद्रीय बैंक, बैंकिंग, प्रतिभूति तथा बीमा विनियामकों के लिए किसी भी समय प्रणालीगत जोखिम का आकलन करने के लिए सूचनाओं का आदान-प्रदान और निरंतर संपर्क हेतु घनिष्ठ समन्वय के साथ काम करने की आवश्यकता है।
- तीसरा, अनेक प्रतिचक्रीय प्रस्ताव राष्ट्रीय अधिकार क्षेत्र में आर्थिक और बैंकिंग परिस्थितियों के आकलन पर निर्भर करते हैं जो बफर पूंजीगत आवश्यकताओं का निर्धारण करेगा - जाहिर है ये एक अधिकार क्षेत्र से दूसरे अधिकार क्षेत्र अलग-अलग होगा, साथ-ही-साथ चक्र भी अलग अलग होंगे। बैंकों के विश्वभर में परिचालन करने का यह परिणाम होगा कि पूंजीगत आवश्यकता विभिन्न अधिकार क्षेत्र में भिन्न हो सकती हैं - लेनदेनों को अधिक अनुकूल अधिकार क्षेत्र में रखने की बात से इंकार नहीं किया जा सकता। जटिल प्रतिभूतियों और विभिन्न कर ढांचे के साथ विनियामक और कर विवाचनों को कम करना एक चुनौती बनी रहेगी।
- चौथा, देशों के संकल्प संबंधी मुद्दे कठिनाई पैदा करते रहेंगे विशेष कर जब राष्ट्रीय विनियामक घरेलू जमाकर्ताओं और हितधारकों की हितों की रक्षा करने का प्रयत्न करेंगे।
- पांचवां, अंतरराष्ट्रीय लेखा मानकों में एकरूपता होना न केवल देश के लिए उचित मानकों के परिवर्तन लाने के संदर्भ में चुनौतीपूर्ण होगा बल्कि उसकी ओर अभिमुख होने के लिए प्रणाली और सक्षमता का निर्माण भी चुनौतीपूर्ण होगा। अप्राप्त लाभ का वितरण न करने से संबंधित विवेकपूर्ण फिल्टर जैसे मुद्दे भी सामने आएंगे।

- छठा, जब वैश्विक वित्तीय बाज़ारों में सुधार के स्पष्ट संकेत हैं, वित्तीय प्रणाली के लचीलेपन की वास्तविक परीक्षा इन सबसे बाहर निकलने की प्रक्रिया के दौरान होगी। हमारी जैसी उभरती हुई बाज़ार अर्थव्यवस्था के लिए चुनौती वैश्विक स्थिरीकरण की इस प्रक्रिया के प्रभाव को प्रबंधित करने की होगी।
- सातवां, उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं के लिए अतिरिक्त चुनौती यह है कि वे अस्थिर अंतरराष्ट्रीय पूंजीगत प्रवाहों का सामना करती हैं जो वित्तीय स्थिरता को सुनिश्चित करने के लिए समष्टि आर्थिक परिस्थितियों पर निर्भर उपयुक्त विनियामक नीतियों को आवश्यक बनाती है।
- अंत में, भारत जैसे देश में, देर से शुरुआत का यह फायदा है कि नए उत्पादों एवं लिखतों को लागू करते वक्त उनके पास वैश्विक अनुभव का लाभ होता है जिससे नवोन्मेष का फायदा उठाते वक्त नुकसान से बचा जा सकता है।